इकाई 1 निदर्शन एवं उपबोधन को समझना

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 निर्देशन : एक परिचय

- 1.3.1 निर्देशन की आवश्यकता
- 1.3.2 निर्देशन का प्रयोजन
- 1.3.3 निर्देशन के सिद्धांत

1.4 निर्देशन के प्रकार

1.5 उपबोधन का अर्थ

- 1.5.1 उपबोधन की परिभाषाएँ
- 1.5.2 उपबोधन और संबंद्धित क्षेत्र

1.6 उपबोधन के सिद्धांत

1.7 उपबोधन के प्रयोजन

1.8 उपबोधन के प्रमुख उपागम

- 1.8.1 निदेशात्मक उपागम
- 1.8.2 अनिदेशात्मक उपागम
- 1.8.3 संकल्पनात्मक उपागम

1.9 उपबोधन प्रक्रिया

- 1.9.1 अवधारणाएँ
- 1.9.2 सोपान/अवस्थाएँ

1.10 शिक्षा में निर्देशन और उपबोधन

1.11 सारांश

1.12 इकाई के अंत में अभ्यास कार्य

1.1 प्रस्तावना

आपने अवश्य अनुभव किया होगा कि कई बार विद्यार्थी कक्षा में बिल्कुल ध्यान नहीं देते, कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करते और विमुख (विरोधी प्रवृत्ति के) भी होते हैं। ऐसे भी उदाहरण हैं जब वे अपने अध्ययन (पढ़ाई) में पीछे रहते हैं, उनकी शैक्षणिक उपलब्धि बहुत कम होती है और यह समस्या तब और भी जटिल हो जाती है जब इस कमी की पूर्ति करने के लिए कोई अभिप्रेरणा नहीं होती और एकाग्रता की भी कमी होती है। इसके अतिरिक्त जब वे उच्च अध्ययन के लिए कोई विशिष्ट विषय चुनना चाहते हैं तो वे किसी भी प्रकार का निर्णय करने में अपने को असमर्थ पाते हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि वे विद्यालय आना भी नहीं चाहते। कक्षा में उपस्थित होने पर भी उनका मन कहीं ओर होता है– दिवा-स्वप्न देखते हैं, समाजीकरण यानी लोगों के साथ मिलने-जुलने में न्यूनतम रुचि रखते हैं अथवा आक्रामक व्यवहार प्रदर्शित करते हैं।

उपरोक्त समस्याएँ शारीरिक, सामाजिक, संवेगात्मक, नैतिक, आध्यात्मिक विकास आदि क्षेत्रों में व्यक्ति के कुसमायोजन के फलस्वरूप हो सकती हैं। शिक्षक का दायित्व है कि वह इनके कारणों को समझे तथा इसे समझ कर या तो इनका निवारण इनकी गंभीरता के अनुसार करें या उन्हें किसी व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित निर्देशक के पास निर्देशन के लिए भेजें। व्यक्ति में निहित क्षमताओं के पूर्ण विकास में मदद के लिए शैक्षिक प्रक्रिया में व्यक्ति के क्रियाकलापों को निदेशित व नियंत्रित करने में निर्देशन और उपबोधन एक सहायक के रूप में कार्य करते हैं।

इस इकाई में हम निर्देशन की प्रकृति, प्रयोजन, कार्यक्षेत्र, निर्देशन की आवश्यकता, उसके प्रकारों, सिद्धांतों व शिक्षा से संबंध की चर्चा करेंगे।

उपबोधन, विद्यालय के समग्र निर्देशन कार्यक्रम का प्रमुख और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भाग माना जाता है। विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम के अन्य सभी कार्यकलाप और सेवाएँ उपबोधन प्रक्रिया से होकर गुजरते हैं और इसे पूरा करने में सहायक भी होते हैं। उपबोधन ही केवल ऐसा साधन है जिसके द्वारा अन्ततः किसी भी व्यक्ति विशेष की सहायता की जाती है। इसलिए, उपबोधन की अवधारणा को भलीभांति समझना अत्यंत आवश्यक है। वृत्तिक आशय में प्रयुक्त उपबोधन का अर्थ, इसके सामान्य जीवन में प्रचलित अर्थ से काफी भिन्न है। सामान्य व्यक्ति के लिए, इसका अर्थ है, सलाह, सुझाव, अनुमोदन या कुछ विशेष जानकारी प्रदान करना। लेकिन वृत्तिक रूप में यह ऐसी वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिससे कोई भी व्यक्ति स्वयं को समझ पाता है और अपने आस-पास के पर्यावरण को समझ कर आत्मनिर्भर, आत्म-निर्देशित और आत्म-संतुष्टि की ओर अग्रसर होते हुए जीवन का अर्थ समझता है और अच्छा जीवन जीने के योग्य बनता है। उपबोध्य की पहले से विद्यमान समस्याओं को सुलझाने के उद्देश्य से उपबोधन दिया जाता है ताकि भविष्य में ऐसी समस्याएँ दोबारा न उभरें और इसके साथ-साथ उपबोध्य का व्यक्तिगत, सामाजिक, संवेगात्मक, शैक्षिक और व्यावसायिक विकास हो सके। अतः हम कह सकते हैं कि उपबोधन उपचारात्मक, रोधात्मक और विकासात्मक पहलुओं से जुड़ा हुआ है। इस इकाई में आपको उपबोधन की अवधारणा और इसके स्पष्ट अर्थ से अवगत कराया जाएगा और बाद में हम उपबोधन के सिद्धांतों व लक्ष्यों, सैद्धांतिक पक्षों, तकनीकों और उपबोधन की प्रक्रिया पर विस्तृत चर्चा करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो जाएंगे कि :

- निर्देशन के स्वरूप, प्रयोजन, कार्यक्षेत्र और उसकी आवश्यकता की व्याख्या कर सकेंगे;
- निर्देशन के विभिन्न सिद्धांतों की सूची बना सकेंगे;
- निर्देशन के प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे;
- शिक्षा के साथ इसके संबंध का उल्लेख कर सकेंगे;
- निर्देशन और उपबोधन की आवश्यकता का पता लगा सकेंगे;
- निर्देशन और उपबोधन के बीच अंतर जान सकेंगे;
- निर्देशन और उपबोधन के लक्ष्यों और उद्देश्यों का वर्णन कर सकेंगे;
- उपबोधन शब्द और विभिन्न क्षेत्रों से इसके संबंध की व्याख्या कर सकेंगे;
- उपबोधन के लक्ष्यों को व्यक्त कर सकेंगे;

- उपबोधन के सिद्धांतों का वर्णन कर सकेंगे;
- उपबोधन की विभिन्न उपागमों की तुलना कर सकेंगे; और
- उपबोधन की प्रक्रिया की चर्चा कर सकेंगे।

1.3 निर्देशन : एक परिचय

निर्देशन में शिक्षा की समस्त प्रक्रिया शामिल है, जो बालक के जन्म से ही आरम्भ हो जाती है। चूंकि व्यक्तियों को अपने समस्त जीवन में सहायता की आवश्यकता पड़ती है, यह कहना गलत नहीं होगा कि निर्देशन की आवश्यकता भी आजीवन पड़ती है।

यदि हम निर्देशन के शाब्दिक अर्थ पर विचार करें तो इसका तात्पर्य है निर्दिष्ट करना, बतलाना, मार्ग दिखाना (मार्गदर्शन)। इसका अर्थ सहायता करने तक ही सीमित न होकर उससे कहीं व्यापक है। यदि कोई व्यक्ति सड़क पर गिर जाता है तो हम उसे उठने में सहायता करते हैं परंतु हम उसका निर्देशन तब तक नहीं करते जबतक उसकी सहायता किसी निश्चित दिशा में जाने के लिए नहीं करते।

निर्देशन शब्द सभी प्रकार की शिक्षा से जुड़ा है– औपचारिक, अनौपचारिक, व्यावसायिक शिक्षा आदि, जिसमें व्यक्ति की सहायता करना ही उद्देश्य होता है ताकि वह अपने पर्यावरण में भावात्मक रूप से समायोजन कर सके। ऐसा भी कहा जा सकता है कि व्यक्तियों को उपयुक्त चयन और समायोजन बनाने हेतु निर्देशन दिया जाता है।

1.3.1 निर्देशन की आवश्यकता

पुराने समय में, जब समाज कम जटिल था, यदि किसी स्थानीय समुदाय में या परिवार के किसी सदस्य को किसी प्रकार की समस्या होती थी तो परिवार का मुखिया अथवा समुदाय का नेता सामान्यतः होता था जो उसका निर्देशन करता था। यद्यपि इस प्रकार का मार्गदर्शन समस्या की गहन और पूरी जानकारी के बिना तात्कालिक परामर्श होता था अथवा यह किसी व्यावसायिक प्रशिक्षण की सहायता के बिना बालकों का निर्देशन करने के लिए अध्यापकों और अभिभावकों का अधिकार क्षेत्र होता था जो कई बार सहायता करने के स्थान पर केवल भ्रामक होता था। परंतु अब यह समाज में विभिन्न परिवर्तनों के कारण संभव नहीं है और व्यक्ति के निर्देशन के लिए व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्तियों की सहायता की आवश्यकता पड़ती है।

मैथ्यूसन (1954) के मतानुसार, शैक्षिक कार्मिक कार्य एक व्यावसायिक प्रक्रिया है जो व्यक्तियों की चार क्षेत्रों में सहायता करती है : (1) स्वयं का मूल्यांकन करना और स्वयं को समझना; (2) व्यक्तिगत-सामाजिक यर्थाथताओं में स्वयं को ढालना (समायोजन करना); (3) मौजूदा और भावी परिस्थितियों के अनुकूल बनाना; और (4) वैयक्तिक क्षमताओं को विकसित करना।

इसलिए कहा जा सकता है कि निर्देशन की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से पड़ती है:

1) शिक्षा के प्रति जागरुकता निरंतर बढ़ रही है। जनसंख्या में वृद्धि और सीमित रोजगार के अवसरों के कारण, शिक्षित बेरोज़गारों की संख्या में वृद्धि हो रही है। शिक्षित बेरोजगार युवकों की सहायता उचित निर्देशन व मार्गदर्शन से की जा सकती है, ताकि वे अपनी क्षमताओं के अनुकूल कार्य स्थिति को पहचान सकें।

2) हमारे विद्यालय इस समय प्राथमिक, मिडिल और उच्चतर स्तरों पर गंभीर समस्याओं का सामना कर रहे हैं। विद्यार्थियों की आवश्यकताओं और योग्यताओं के अनुसार पाठ्यचर्या विकसित करके निर्देशन सेवाएँ शैक्षिक प्राधिकारियों की सहायता कर सकती हैं।

3) निर्देशन के माध्यम से विशेष कार्यों के लिए सही व्यक्तियों की पहचान की जा सकती है।

4) समाज में हो रहे परिवर्तनों के कारण, परिवार में द्वंद्व बढ़ते जा रहे हैं और किशोर तनावपूर्ण परिस्थितियों से गुजर रहे हैं जिसके कारण कुंठाएँ बढ़ रही हैं। किशोरावस्था में अनुशासन व अपराध की समस्याएँ भी उत्पन्न होती हैं।

5) जीवन-शैली में तेज़ी से बदलाव और जटिलता के कारण अभिभावकों पर समाज की माँगे (अपेक्षाएँ) भी बढ़ रही हैं जिसने अभिभावकों और बालकों के बीच वैयक्तिक संपर्क को कम कर दिया है। इस प्रकार की घटनाओं के कारण कुसमायोजित (तालमेल स्थापित न कर पाने वाले) बालकों की समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं जो बहुत आम होती जा रही हैं।

6) पहले विभिन्न रोज़गार के अवसरों के बारे में अधिक सजगता और जागरुकता नहीं थी। एक किसान का बेटा कृषि व्यवसाय अपनाता था और वकील का बेटा वकालत करता था चाहे उनकी अभिक्षमता/अभिरुचि उस व्यवसाय के लिए हो या न हो। निर्देशन के माध्यम से विद्यार्थियों की योग्यताओं, अभिरुचियों और अभिक्षमताओं के अनुसार व्यवसाय या पाठ्यक्रम चुनने में उनकी सहायता की जा सकती है।

7) मानव मूल्यों में गिरावट तथा निहित स्वार्थों के कारण हो रहे धार्मिक तथा नैतिक शोषण के कारण सही रास्ता चुनने के लिए विद्यार्थियों के लिए निर्देशन अनिवार्य हो गया है ताकि वे दूसरों से गुमराह होने के बजाए धर्म और नैतिकता में अपना चिंतन और कार्य विकसित कर सकें।

8) निर्देशन की आवश्यकता व्यक्तियों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए भी पड़ती है।

9) हमारे देश में कुछ समस्या-क्षेत्र हैं जिनमें मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़ती है जैसे, जातिगत समस्याएँ, नई आर्थिक नीतियों और सेवानिवृत्त व्यक्तियों की समस्याएँ।

10) महिलाओं की परंपरागत छवि में परिवर्तन के कारण से पारिवारिक ढांचे में संतुलन बनाने के लिए निर्देशन की आवश्यकता है।

इस प्रकार, निर्देशन की भूमिका जन्म से मृत्यु तक जीवनपर्यंत चलती रहती है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) निम्नलिखित कथन सही है अथवा गलत, उपयुक्त शब्द पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) निर्देशन 'शिक्षित बेरोजगारों' की सहायता करता है। (सही/गलत)

ii) अनुशासन और अपराध की समस्याएँ सुलझाने में निर्देशन की आवश्यकता नहीं पड़ती। (सही / गलत)

iii) निर्देशन तनाव और कुंठाएँ बढ़ाता है। (सही / गलत)

iv) निर्देशन अंतःवैयक्तिक संबंधों को सुधारने में सहायता करता है। (सही / गलत)

v) निर्देशन व्यक्तियों को सही मार्ग दिखाता है। (सही / गलत)

vi) निर्देशन विद्यार्थियों की केवल शैक्षिक आवश्यकताएँ पूरी करता है। (सही / गलत)

1.3.2 निर्देशन का प्रयोजन

निर्देशन का कार्य व्यक्ति को योग्यताओं, अभिरुचियों और समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढालने में सहायता करना है। दूसरे शब्दों में, इसका तात्पर्य वांछित दिशा में विकास करने में व्यक्ति की सहायता करना है और बदलते समय व समाज की आवश्यकताओं तथा मांगों के अनुकूल स्वयं को बनाना है।

प्रारंभिक विद्यालय स्तर पर निर्देशन का प्रयोजन घर, विद्यालय, धर्म और समकक्ष (हमउम्र के साथ) संबंधों (विद्यार्थी संबंधों) जैसी प्राथमिक समूह शक्तियों के एकत्रीकरण के लिए विद्यार्थियों की सहायता करना है। ये वे शक्तियाँ हैं जो विद्यार्थियों की किशोरावस्था के लिए आधार बनाती हैं और फिर उन शक्तियों को एक सामंजस्यपूर्ण व्यक्ति में परिवर्तित करती है।

माध्यमिक विद्यालय स्तर पर निर्देशन, मुख्य रूप से इन शक्तियों के विभिन्न वैशिष्टय पहलुओं पर बल देता है क्योंकि ये विद्यार्थियों के ज्ञान, स्वीकृति और स्वयं की दिशा / पहलुओं को प्रभावित करता है। शैक्षिक योजना, रोजगार चयन, अंतःवैयक्तिक संबंधों व अंतःवैयक्तिक स्वीकृति के क्षेत्रों में उनकी क्षमताओं और अवसरों के अनुसार अपने विकास के लिए विद्यार्थियों को सेवाएँ प्रदान करना माध्यमिक स्तर पर निर्देशन सेवाओं का मूल कार्य है।

इस प्रकार, निर्देशन का प्रयोजन वैयक्तिक संतुष्टि और सामाजिक उपयोगिता – जिसमें विद्यार्थी, अध्यापक, अभिभावक आदि शामिल हैं, के लिए आत्म-स्थितिपरक संबंधों को समझने और उनसे निपटने के लिए व्यक्ति की क्षमता में सुधार करना है।

विद्यार्थियों के लिए योगदान

क) उनकी योग्यताओं, अभिक्षमताओं, अभिरुचियों और कमियों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करके उन्हें स्वयं को समझने में सहायता करना।

ख) अन्य लोगों से बेहतर संबंध बनाना और उस परिवेश को समझना जिसमें वे रहते हैं।

ग) वृत्ति, विषयों आदि के बारे में जानकारी प्राप्त कर विद्यालय से सर्वाधिक जाना।

घ) अपनी अभिरुचियों, योग्यताओं, का पता लगाना, कार्यशील समाज के विभिन्न पहलुओं के बारे में जानना और उनकी योग्यताओं का अधिकतम लाभ उठाने के लिए सीखना।

च) प्रतिभाशाली (gifted) और मंद अध्येताओं तथा विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों की पहचान करना एवं उनमें उचित अभिवृत्ति विकसित करने में उनकी सहायता करना और उनकी संभावित योग्यताओं का अधिक से अधिक उपयोग करना।

अध्यापक की सहायता

1) निर्देशन, वास्तव में परामर्शकर्ता द्वारा चलाए जा रहे सेवाकालीन शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से अपने विद्यार्थियों के बारे में अध्यापकों की जानकारी बढ़ाने के लिए अवसर प्रदान करता है। विद्यालय उपबोधक अध्यापकों को परीक्षणों का संचालन करने और परीक्षणों के परिणामों की व्याख्या भी प्रतिपादित करने में सहायता करता है। ये परीक्षणों के परिणाम वह सूचना देते हैं जो अध्यापकों को उनके विद्यार्थियों के कक्षा व्यवहार और कार्य-निष्पादन को बेहतर रूप से समझने में उनकी सहायता करते हैं।

2) विद्यार्थियों की विशेष अभिरुचियों, क्षमताओं और पूर्व अनुभव संबंधी आंकड़े निर्देशन संकाय द्वारा संचयी अभिलेख पर उपलब्ध कराए जाते हैं। विद्यार्थियों की शारीरिक स्थिति, चिकित्सीय इतिहास, पारिवारिक पृष्ठभूमि, शैक्षिक रिकार्ड, मानकीकृत परीक्षाओं में प्राप्तांक, वैयक्तिक विशेषताएँ आदि विद्यार्थी को बेहतर शिक्षण प्रदान करने में अध्यापक की सहायता करते हैं।

3) अभिभावकों के लिए लाभदायक– अध्यापक बालक की योग्यताओं, अभिरुचियों और क्षमताओं की स्पष्ट जानकारी अभिभावकों को दे सकता है ताकि अभिभावक बालक को जान-समझ सके, जैसा है वैसा ही उसे स्वीकार कर सके।

4) क्षेत्रीय समुदाय समष्टि की बेहतर मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त करने में सहायता करना।

5) पूरे विद्यालय की कई प्रकार से मदद करना– जैसे विद्यार्थियों की उनकी अभिरुचि और अभिक्षमताओं के आधार पर उपबोधन करके पाठ्यक्रम चुनने में सहायता करना। विद्यालयी कार्यक्रम के उन पहलुओं पर प्रशासन संबंधी जानकारी देना जो विद्यार्थियों के रोज़गार और व्यक्तित्व निर्माण से संबंधित हैं।

निर्देशन का कार्यक्षेत्र

निर्देशन में निम्नलिखित क्षेत्र शामिल हैं :

1) व्यक्ति एवं पाठ्यचर्या

क) शैक्षिक उपलब्धि और प्रगति

ख) पाठ्यचारी (curricular) और पाठ्यचर्या सहगामी (co-curricular) कार्यकलापों के माध्यम से वैयक्तिक विकास

2) विद्यालय में व्यक्ति के निजी-सामाजिक संबंध

क) स्वयं को समझना और वैयक्तिक विशेषताओं की जानकारी

ख) दूसरों को समझना और उनके साथ संबंध स्थापित करना

3) व्यक्ति व उसकी शैक्षिक, व्यावसायिक अपेक्षा एवं अवसर

क) भावी शिक्षा और व्यावसायिक अपेक्षाओं की पूर्ति करने के लिए तैयार करना

ख) शैक्षिक और व्यावसायिक क्षेत्रों में उपयुक्त अवसरों का उपयोग

शैक्षिक व व्यावसायिक निर्देशन के कार्यक्षेत्र को समझने के लिए अब हम उपर्युक्त वर्णित निर्देशन में प्रत्येक क्षेत्र पर एक-एक करके चर्चा कर सकते हैं।

1) क) **शैक्षिक उपलब्धि और प्रगति :** कभी-कभी ऐसा होता है कि विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि कम होती है परंतु बुद्धि-लब्धि अधिक होती है। ऐसे मामले में निर्देशन कार्यकर्ता कुछ मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की सहायता से पता लगा सकता है कि कमी कहाँ है और इस प्रकार वांछित स्तर प्राप्त करने में विद्यार्थी की सहायता कर सकता है। कभी-कभी विद्यार्थी की अध्ययन से संबंधित कुछ ऐसी समस्याएँ भी होती हैं कि वह अध्ययन नहीं कर पाता और अपने शिक्षकों के साथ उन्हें सुलझाने में सफल नहीं हो पाता। इसलिए, इन परिस्थितियों में निर्देशन कार्यकर्ता प्रभावकारी सिद्ध हो सकता है।

ख) **वैयक्तिक विकास :** निर्देशन कार्यक्रम इस प्रकार तैयार किए जाते हैं कि विद्यार्थियों का वैयक्तिक विकास सर्वोत्तम रूप से हो पाता है।

2) **वैयक्तिक-सामाजिक संबंध :** दूसरों के साथ अच्छी तरह आगे बढ़ना और उनके साथ अच्छे संबंध बनाना इस बात का सूचक है कि व्यक्ति समाज में भली-भांति समायोजित है। निर्देशन स्वयं को समझ कर दूसरों के साथ प्रभावकारी ढंग से व्यवहार करने के लिए व्यक्ति की सहायता करता है।

3) **शैक्षिक और व्यावसायिक अपेक्षाओं के साथ व्यक्ति का संबंध :** निर्देशन शैक्षिक विषयों, रोज़गार आदि के चयन जैसे जीवन के विभिन्न चरणों में प्रभावकारी निर्णय करने में व्यक्ति की सहायता करता है और विभिन्न रोज़गारों और उनसे जुड़े क्षेत्रों से संबंधित आवश्यक सूचना उपलब्ध कराता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

2) निम्नलिखित को मिलाइए :

समूह - क	समूह - ख
i) व्यक्ति का पाठ्यचर्या के साथ संबंध	क) स्वयं, दूसरों और उनके साथ संबंधों को समझना
ii) विद्यालय में विद्यार्थियों के वैयक्तिक-सामाजिक संबंध	ख) शैक्षिक उपलब्धि और प्रगति
iii) विद्यार्थी का शैक्षिक-व्यावसायिक अपेक्षाओं और अवसरों के साथ संबंध	ग) उपयुक्त शैक्षिक और व्यावसायिक अवसरों (सुविधाओं) का उपयोग

1.3.3 निर्देशन के सिद्धांत

निर्देशन कुछ सिद्धांतों पर आधारित हैं। यह आवश्यक है कि हमें मानव जीवन में उपयोग से पहले किसी भी विषय के ज्ञान के प्रयोग में निहित विभिन्न कार्यों की जानकारी तथा उस विषय के बुनियादी सिद्धांतों को समझ लेना चाहिए।

निर्देशन के सिद्धांत इस प्रकार हैं :

1) **निर्देशन एक जीवनपर्यंत प्रक्रिया है :** निर्देशन एक आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है जो बाल्यावस्था से मृत्युपर्यंत चलती है। यह कोई ऐसी सेवा नहीं है जो किसी विशेष निर्धारित समय अथवा स्थान पर आरंभ अथवा समाप्त होती है।

2 **निर्देशन वैयक्तिकरण पर बल देता है :** यह इस बात पर महत्त्व देता है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व को विकसित करने के लिए स्वतंत्रता दी जानी चाहिए और जब आवश्यकता हो तो व्यक्ति का निर्देशन किया जाना चाहिए।

विभिन्न स्तरों पर व्यष्टि सापेक्ष-शिक्षा के लिए, निर्देशन सेवाओं का उचित संगठन बहुत ज़रूरी है ताकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यताओं, अभिरुचियों और अभिक्षमताओं को अनन्य/विलक्षण तरीकों से विकसित कर सके।

3) **निर्देशन आत्म-निर्देशन को महत्त्व देता है :** निर्देशन का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का विकास इस प्रकार करना है कि उसे निर्देशन की आवश्यकता न हो। निर्देशन व्यक्ति को अपने पर्यावरण में अच्छी तरह समायोजित करता है और उसे आत्म-निर्भरता तथा आत्म-निर्देशन की ओर अग्रसर करता है। जो विद्यार्थी सहायता प्राप्त करना चाहता है वह अपने उपबोधक से पूछता है अथवा उससे अपनी कठिनाइयों को दूर करने के लिए अनुरोध कर सकता है। परंतु निर्देशन की प्रशंसा वह तब ही करता है जब उसे अनेक ऐसी वैकल्पिक प्रक्रियाएँ समझाई व दर्शायी जाती हैं जिन्हें वह प्रत्येक प्रक्रिया के संभावित परिणामों के साथ अपना सके।

4) **निर्देशन सहयोग पर आधारित है :** निर्देशन दो व्यक्तियों– निर्देशन जिज्ञासु और निर्देशन प्रदाता के पारस्परिक सहयोग पर निर्भर करता है। किसी भी व्यक्ति को उसकी सहमति के बिना निर्देशन प्राप्त करने के लिए बाध्य/विवश नहीं किया जा सकता।

5) **निर्देशन सभी के लिए है :** निर्देशन प्रत्येक व्यक्ति की क्षमताओं के विकास का ध्येय रखता है। यद्यपि कुसमायोजित विद्यार्थियों को उपबोधक अधिक समय देते हैं, परंतु निर्देशन का मूल सिद्धांत यह है कि निर्देशन कुछ व्यक्तियों को ही प्राप्त न होकर अनेक व्यक्तियों को उपलब्ध होना चाहिए। यह बहुत अच्छा या सहायक होगा कि सामान्य और श्रेष्ठ सभी बालकों पर समान रूप से ध्यान देकर उनके बौद्धिक-विकास को उद्दीप्त किया जाए।

6) **निर्देशन एक संगठित कार्यकलाप है :** निर्देशन एक आकस्मिक कार्यकलाप नहीं है। एक व्यापक कार्यक्रम होने के बावजूद कुछ प्राप्त करने का इसका एक निश्चित प्रयोजन होता है। अतः यह एक व्यवस्थित और सुसंगठित क्रियाकलाप है।

7) **निर्देशन कार्यकर्ताओं को विशेष तैयारी की आवश्यकता होती है :** साधारणतः यह माना जाता है कि निर्देशन में सामान्य सर्वेक्षण पाठ्यक्रम– जो कि सभी अध्यापकों को तैयार करने में प्रत्येक अध्यापक की न्यूनतम आवश्यकता होनी चाहिए, के अलावा विशेषज्ञ के लिए शिशु एवं किशोर विकास, मानसिक स्वास्थ्य आदि में ज्ञान व व्यावहारिक अनुभव सहित मनोविज्ञान में प्रशिक्षण अवश्य होना चाहिए।

निर्देशन कार्यकर्ता को यह भी जानना चाहिए कि उसके समुदाय में किस प्रकार की एजेंसियाँ और संसाधन उपलब्ध हैं ताकि सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्ति इन संसाधनों का उपयोग कर सकें।

इसके साथ-साथ मौजूदा विद्यालयी निर्देशन कार्यक्रम का आवधिक (समय-समय पर) मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

8) **निर्देशन व्यक्तिगत भेदों को सम्मान देता है :** दो व्यक्ति एक समान नहीं होते। निर्देशन विद्यार्थियों के बीच इन व्यक्तिगत असमानताओं (भिन्नताओं) को समझता है

और प्रत्येक व्यक्तियों की विलक्षण आवश्यकताओं, समस्याओं और विकासात्मक विशेषताओं को सम्मान प्रदान करता है।

9) **निर्देशन अनभिव्यक्त तथ्यों को भी ध्यान में रखता है :** निर्देशन के सभी व्यवहारों में सर्वाधिक हानिकारक निर्देशन व्यवहार उपयुक्त आंकड़ों के उपलब्ध न होने पर भी उनके बिना उपबोधन करना है। आंकड़ों के अभाव में निर्देशन नीम-हकीम खतरा-ए-जान जैसा है। बुद्धिमतापूर्वक निर्देशन करने के लिए यथासंभव पूरी जानकारी के साथ, व्यक्तिगत मूल्यांकन और अनुसंधान के कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए और प्रगति तथा निर्देशन कार्यकर्त्ताओं के लिए उपलब्धि के सही संचयी रिकार्ड उपलब्ध कराए जाने चाहिए।

10) **निर्देशन लचीला होता है :** संगठित निर्देशन कार्यक्रम व्यक्ति एवं समुदाय की आवश्यकताओं के अनुसार लचीला होना चाहिए।

11) **निर्देशन अंतःसंबंधित क्रियाकलाप है :** प्रभावकारी निर्देशन के लिए व्यक्ति के बारे में संपूर्ण सूचना का होना ज़रूरी है क्योंकि किसी भी समस्या को समूचे कार्यक्रम के साथ संबद्ध किए बिना अलग से देखना कठिन होता है। जैसे शैक्षिक, व्यावसायिक और वैयक्तिक-सामाजिक निर्देशन परस्पर-संबंधित हैं परंतु इन्हें समूचे निर्देशन कार्यक्रम के विभिन्न पहलुओं के तौर पर अलग समझा जा सकता है।

12) **निर्देशन आचार संहिता पर बल देता है :** मार्गदर्शन के नैतिक अनुप्रयोगों में उपबोधित किए जाने वाले व्यक्तियों के व्यक्तित्व के प्रति सम्मान शामिल होता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

3) निम्नलिखित कथन सही है अथवा गलत, उपयुक्त शब्द (सही/गलत) पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) निर्देशन जन्म के समय से ही आरंभ हो जाता है और किशोरावस्था तक चलता है। (सही/गलत)

ii) निर्देशन में वैयक्तिकरण पर बल दिया जाता है। (सही/गलत)

iii) निर्देशन व्यक्ति को केवल अपना समायोजन करने में सहायता करता है। (सही/गलत)

iv) निर्देशन केवल कुसमायोजित व्यक्तियों की आवश्यकताएँ ही पूरी करता है। (सही/गलत)

v) निर्देशन व्यक्तिगत भिन्नताओं पर ध्यान नहीं देता। (सही/गलत)

vi) निर्देशन कड़े नियमों से बंधा है। (सही/गलत)

vii) निर्देशन सूचना की गोपनीयता बनाए रखता है। (सही/गलत)

viii) निर्देशन कार्यकर्ताओं को विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती। (सही/गलत)

ix) निर्देशन एक आकस्मिक क्रियाकलाप है। (सही/गलत)

1.4 निर्देशन के प्रकार

निर्देशन एक सतत् प्रक्रिया है और यह जीवन के सभी पहलुओं से संबंधित है। अतः निर्देशन की आवश्यकता जीवन के विभिन्न पहलुओं में पड़ती है। सामान्यतः निर्देशन सेवाओं के मुख्य प्रकार हैं :

1) शैक्षिक निर्देशन

2) व्यावसायिक वृत्तिक निर्देशन

3) वैयक्तिक-सामाजिक निर्देशन

शैक्षिक निर्देशन

यह व्यक्ति की सहायता करने की प्रक्रिया है ताकि वह अपनी शिक्षा के लिए सर्वाधिक अनुकूल परिवेश में अपने आप को जमा सके। यह व्यक्ति के शैक्षिक कार्यक्रम को बुद्धिमत्तापूर्वक योजना बनाने तथा स्थिति के अनुसार स्वयं को ढालने में सहायता करने से जुड़ा है ताकि व्यक्ति सफलतापूर्वक उस कार्यक्रम को आगे बढ़ा सके जिसे समाज अपने लिए और उसके लिए उचित समझता है। यह मुख्यतः पाठ्यक्रमों, पाठ्यचर्या और अध्ययन संबंधी समस्याओं से जुड़ा है। विद्यार्थियों की निम्नलिखित अध्ययन कौशलों को विकसित करने हेतु प्रशिक्षण दिया जा सकता है :

- विभिन्न स्रोतों से शैक्षिक सूचना/आँकड़ों का पता लगाना व उन्हें एकत्र करना
- शैक्षिक आँकड़ों को सुव्यवस्थित करना
- अध्ययन पाठ्यक्रम संबंधी आँकड़ों/सूचना को लिंक करना/उपयोग करना
- नोट्स लेना (टिप्पणियाँ लिखना)
- नोट्स बनाना
- अपेक्षित आँकड़ों को पुनः प्राप्त करना
- सार प्रस्तुत करना
- याद करने की (स्मरण) तकनीकें

इसके अलावा, विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम आलोचनात्मक चिंतन विकसित करने में भी विद्यार्थियों की मदद कर सकता है। निर्णय लेने और समस्या-समाधान करने संबंधी कौशल विकसित करने, विद्यालय के माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों को भविष्य में उच्चतर शिक्षा की योजना बनाने हेतु भी निर्देशन की आवश्यकता होती है।

व्यावसायिक/वृत्तिक निर्देशन

उचित व्यवसाय चुनने, इसके लिए तैयारी करने, उसमें प्रवेश करने तथा प्रगति करने में व्यक्ति की सहायता करने की प्रक्रिया व्यावसायिक निर्देशन कहलाता है। व्यावसायिक निर्देशन माध्यमिक विद्यालय, महाविद्यालयों में विद्यार्थियों के शैक्षिक पाठ्यक्रमों के और व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के रूप में व्यापारिक तथा वाणिज्यिक श्रेणी के पाठ्यक्रमों से जुड़ा है।

वैयक्तिक-सामाजिक निर्देशन

वैयक्तिक-सामाजिक निर्देशन में सामाजिक, भावात्मक और अवकाश-समय निर्देशन शामिल है। यह स्वास्थ्य, भावात्मक, समायोजन, सामाजिक समायोजन आदि की समस्याओं से

संबंधित है। वैयक्तिक निर्देशन का प्रयोजन व्यक्ति की उसके भौतिक (शारीरिक), भावात्मक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास में सहायता करना है।

अन्य प्रकार

मनोरंजनात्मक (मनोविनोदार्थ) मार्गदर्शन निर्देशन व्यक्ति की वैयक्तिक विशेषताओं के अनुकूल मनोविनोद गतिविधियों को चुनने में व्यक्ति की सहायता करता है। समुदाय निर्देशन में विभिन्न कार्यकलापों के कार्यक्रम की योजना तैयार करने में व्यक्ति के लिए सहायता करना शामिल है। ये क्रियाकलाप व्यक्ति की अपने व्यक्तित्व की विशेषताओं और उसके अन्य कार्यकलापों में संतुलन बनाए रखते हैं।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

4) रिक्त स्थान भरिए :

i) निर्देशन एक ..... प्रक्रिया है।

ii) व्यावसायिक निर्देशन व्यक्ति की ..... चुनने में सहायता करता है।

iii) वैयक्तिक निर्देशन का प्रयोजन व्यक्ति की ..... और ..... विकास में सहायता करना है।

iv) मनोरंजनात्मक (मनोविनोदार्थ) मार्गदर्शन ..... चुनने में सहायता करता है।

v) समुदाय निर्देशन में ..... के कार्यक्रम की योजना बनाना शामिल है।

1.5 उपबोधन का अर्थ

1.5.1 उपबोधन की परिभाषाएँ

उपबोधन, निर्देशन कार्यक्रम का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भाग है। वृत्तिक दृष्टिकोण से उपबोधन का अर्थ, इसके प्रचलित अर्थ से काफी भिन्न है। आइए अब उपबोधन के अर्थ का अधिक बारीकी से अध्ययन करें। इसके लिए हमें उपबोधन की विभिन्न परिभाषाओं का विश्लेषण करना होगा। यह अवधारणा को समझने में सहायक होगा।

एक लोकप्रिय व सर्वाधिक प्रचलित परिभाषा के अनुसार व्यक्तिगत उपबोधन दो व्यक्तियों के बीच एक वैयक्तिक और प्रत्यक्ष (face to face) संबंध है जिसमें उपबोधक अपने संबंध और अपनी विशिष्ट क्षमताओं द्वारा एक ऐसी अधिगम (सीखने) परिस्थिति मुहैया कराता है जिसमें उपबोध्य– जो एक सामान्य व्यक्ति होता है, की स्वयं अपने को और वर्तमान व संभावित भावी स्थितियों को समझने में मदद की जाती है ताकि वह अपनी विशिष्टताओं और क्षमताओं का प्रयोग इस तरह से करें जो उसके स्वयं के लिए संतोषप्रद और समाज के लिए लाभकारी हो और साथ ही साथ वह भावी समस्याओं का समाधान करना और भावी ज़रूरतों को पूरा करना भी सीख सके (टालबर्ट, 1972)।

ब्लैकहैम (1977) के अनुसार, ''उपबोधन सहायता करने का एक अद्वितीय संबंध है जिसमें उपबोध्य को उसकी इच्छानुसार सीखने, सोचने, चिंतन करने, अनुभव करने और बदलने के तरीकों के लिए अवसर प्रदान किए जाते हैं।''

शर्तज़र एंड स्टोन (1974) का मानना है कि, ''उपबोधन एक अन्तःक्रियात्मक प्रक्रिया है जो स्वयं की और पर्यावरण की सार्थक समझ को सुगम बनाती है जिसके परिणामस्वरूप वह भावी व्यवहार के लिए लक्ष्यों व मूल्यों को स्थापित और/या उनका स्पष्टीकरण कर सकता है।

कौटल एंड डाउनी (1970) ने उपबोधन को इस तरह परिभाषित किया है : ''वह प्रक्रिया जिसके द्वारा उपबोधक अपने उपबोध्य को उसके स्वयं के बारे में तथा दूसरों के साथ उसकी अन्तःक्रिया के विषय में जानकारी का सामना करने, समझने और स्वीकार करने में मदद करता है ताकि वह अपने जीवन के विभिन्न विकल्पों के बारे में प्रभावशाली (सार्थक) निर्णय ले सके।''

स्टेफायर और ग्रांट (1972) के अनुसार, उपबोधन प्रशिक्षित उपबोधक और उपबोध्य के बीच व्यावसायिक संबंध को निरूपित करता है। यह संबंध व्यक्ति-से-व्यक्ति का होता है हालांकि इसमें कई बार दो से अधिक व्यक्ति भी हो सकते हैं। यह उपबोध्य को उसके जीवन अन्तरालों से संबंधी मतों/विचारों को समझने व उन्हें स्पष्ट करने में मदद के लिए है ताकि वह अपनी अनिवार्य प्रकृति के अनुरूप उपलब्ध क्षेत्रों में सार्थक और विवेकपूर्ण चयन कर सके। यह परिभाषा दर्शाती है कि उपबोधन एक प्रक्रिया है, दूसरे शब्दों में कहें तो एक संबंध है जिसे लोगों को चयन करने में मदद के लिए तैयार किया जाता है। वे शिक्षा (अधिगम), व्यक्ति-विकास और स्व-ज्ञान जैसे विषयों में बेहतर चयन कर सकते हैं, जिन्हें बेहतर भूमिका बोध और ज्यादा प्रभावी भूमिका व्यवहार में परिवर्तित किया जा सकता है।

2010 में आयोजित अमेरिकन काउंसलिंग ऐसोसिएशन सम्मेलन में भाग लेने वाले 31 संगठनों में से 29 ने उपबोधन की इस परिभाषा को सर्वसम्मति से सहमति प्रदान की :

उपबोधन एक व्यावसायिक संबंध है जो विविध व्यक्तियों, परिवारों और समूहों को मानसिक स्वास्थ्य, कल्याण, शिक्षा और वृत्तिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिए सशक्त बनाता है (कैप्लन, 2014, पृ. 366)।

उपबोधन चिकित्सीय परिवेश में एक अन्तःक्रिया है जो मुख्यतः संबंधों, धारणाओं और व्यवहार (भावनाओं सहित) के बारे में चर्चा करने पर केन्द्रित होती है जिसके माध्यम से बच्ची की अनुभव की गई समस्या पर प्रकाश डाला जाता है या उपयुक्त या उपयोगी तरीके से रचित या पुनःरचित किया जाता है और जिससे नए हल उत्पन्न होते हैं और समस्या एक नया अर्थ धारण/ग्रहण कर लेती है (बोर. 2002, पृ. 15)।

उपबोधन स्व-ज्ञान, भावनात्मक स्वीकृति और वृद्धि तथा व्यक्तिगत संसाधनों के अनुकूलतम विकास को बढ़ावा देने के लिए संबंधों का कुशल और सैद्धांतिक प्रयोग है। इसका समग्र लक्ष्य ज्यादा संतोषप्रद और संसाधनपूर्ण तरीके से रहने के लिए काम के अवसर प्रदान करना है (ब्रिटिश एसोसिएशन फॉर काउंसलिंग, 1991, पृ.1)।

उपयुक्त विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि ''उपबोधन एक प्रकार का संबंध होता है। इसमें व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित और सक्षम उपबोधक और उपबोध्य के आपसी संबंधों का समावेश होता है। स्नेह, विश्वास, आपसी समझ और स्वीकृति इसकी विशेषताएँ होती हैं।

1.5.2 उपबोधन और संबंद्धित क्षेत्र

उपबोधन को बेहतर तरीके से समझने में, अन्य क्षेत्रों से जुड़े इसके संबंधों के अध्ययन आवश्यक हैं।

उपबोधन और साइकोथेरेपी (मनोचिकित्सा)

'उपबोधन' और 'मनोचिकित्सा' का प्रयोग अक्सर समानार्थी माने जाते हैं, इसीलिए एक-दूसरे के लिए इनका प्रयोग किया जाता है। उपबोधन के लिए मनोचिकित्सा का और मनोचिकित्सा के लिए उपबोधन शब्द का प्रयोग किया जाता है। दोनों का अर्थ समान है या इनमें अंतर है, इसके विषय में व्यावसायिकों का मत एक नहीं है। तथापि, अधिकांश साहित्य में वर्णित है कि उपबोधन से अभिप्राय अल्पकालिक मानसिक स्वास्थ्य उपचार है जबकि मनोचिकित्सा के अंतर्गत दीर्घकालिक परामर्श और उपचार शामिल है। उपबोधन यहाँ और अभी की स्थिति में उत्पन्न भावनात्मक परेशानी है। उदाहरण के लिए, माता-पिता को गंवा चुके बच्चे, परीक्षा में फेल होने वाले बच्चे या गृह-कलह अथवा भूकंप जैसी जोखिमपूर्ण आपदा का सामना कर चुके बच्चों के समूह की संवेगात्मक परेशानी या व्यथा पर काबू पाने के लिए परामर्श-सत्र (उपबोधन सत्र) लाभप्रद होंगे और जीवन के आगे बढ़ने में सहायक होंगे। मनोचिकित्सा उस स्थिति में उपयोगी होता है जहां व्यक्ति काफी लंबे समय से निरंतर संवेगात्मक परेशानी और व्यथाग्रस्त है और यह उसके व्यवहार में प्रकट होने लगता है। ऐसे मामलों में मनोचिकित्सा व्यक्ति को स्वयं अपनी समस्या से निपटने और रोगी के मन में बैठी घटनाओं, मनोवृत्तियों और विचार प्रक्रिया में गहराई से झांकने में व विचार करने में मदद करता है, जो उसकी मनःस्थिति का कारण बनी। संक्षेप में, मनोचिकित्सा व्यक्ति को स्वयं को समझने और परेशानियों के मूल कारणों को सुलझाकर अपने जीवन के अनुभवों के बारे में नवीन दृष्टिकोण विकसित करता है।

व्यावसायिक प्रशिक्षण, अन्य सहकर्मियों की वरीयताएँ और किए गए कार्य इस बात को प्रभावित कर सकते हैं कि कौन-सी व्यावसायिक उपाधि–'उपबोधक' या 'मनोचिकित्सक' चुनी जाए। विद्यालयी परिवेश में, उपबोधन में मनोचिकित्सा या मनोचिकित्सा में उपबोधन शामिल हो सकता है। कुछ केवल सूचना देने और अपबोधन में निहितार्थों का ही कार्य करते हैं। उन्हें बच्चों का उपचार करने के लिए मनोचिकित्सा उपागमों और तरीके का प्रयोग नहीं करना चाहिए। अप्रशिक्षित अपबोधक ज्यादा प्रभावी नहीं हो सकते और बच्चों को क्षति भी पहुँचा सकते हैं।

उपर्युक्त उल्लिखित भिन्नताओं के बावजूद, इन दोनों क्षेत्रों को अलग करना काफी कठिन कार्य है। इन दोनों क्षेत्रों में भिन्नताओं की तुलना में अतिव्याप्ति अधिक है। इन दोनों में उपबोध्य/सेवार्थी और चिकित्सक/उपबोधक के बीच के संबंधों को अधिक महत्त्व दिया जाता है। जटिल प्रकृति की संवेगात्मक समस्याओं से निपटने में, उपबोधक घनिष्ठ रूप से मनोचिकित्सा का अनुप्रयोग करता है।

निर्देशन और उपबोधन

निर्देशन और उपबोधन दोनों अंतरपरिवर्त्य रूप में प्रयुक्त होते हैं। आम आदमी और यदा-कदा उपबोधक भी इनका प्रयोग इस प्रकार करते हैं– जैसे कि ये समानार्थक हैं। लेकिन यह सही नहीं है। दोनों एक-दूसरे से जुड़ी प्रक्रियाएँ हैं लेकिन इन्हें समरूपी नहीं कहा जा सकता। निर्देशन अपेक्षाकृत अधिक व्यापक प्रक्रिया है जिसमें उपबोधन भी शामिल है। निर्देशन सेवाओं के अंतर्गत उपबोधन के अतिरिक्त अन्य बहुत-सी सेवाएँ शामिल हैं। हम कह सकते हैं कि समूचे निर्देशन कार्यक्रम में उपबोधन सर्वाधिक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण सेवा है।

अनुदेश और उपबोधन

उपबोधन से संबद्ध अन्य महत्त्वपूर्ण शब्द हैं, अनुदेश। अनुदेश और उपबोधन के बीच कुछ मूलभूत अंतर हैं। सामान्यतौर पर अनुदेश प्राप्तकर्ता, अनुदेशों का अनिवार्य रूप से अनुसरण करता है जबकि उपबोधन के अंतर्गत उपबोध्य उपबोधक की बातों को मानने के लिए बाध्य नहीं होता। वास्तव में उपबोधन के अंतर्गत किसी चीज को करने की बात नहीं कही जाती। इसी प्रकार से यद्यपि अनुदेश देने का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का विकास करना है और तात्कालिक उद्देश्य विषय, कौशल आदि की शिक्षा देना है लेकिन उपबोधन के मामले में यह सिद्धांत लागू नहीं होता। जहाँ एक ओर अनुदेशात्मक कार्यक्रम समयबद्ध और सुव्यवस्थित अनुदेशात्मक कार्यक्रम होता है, वहीं, दूसरी ओर उपबोधन न तो समयबद्ध है न ही व्यवस्थित।

सलाह और उपबोधन

कभी-कभी उपबोधन से अभिप्राय सलाह देना समझा जाता है। इस भ्रांति को दूर करना आवश्यक है। क्या किया जाए यह जानने के लिए सलाह ली जाती है तथा सलाह इस अपेक्षा के साथ दी जाती है कि जो बताया गया है वह किया जाएगा। सलाह लेने वाला व्यक्ति किए जाने वाले कार्य और उसके परिणामों के लिए वास्तव में उत्तरदायी नहीं होता और अपने कृत्य से संबद्ध सभी कारकों को समझना भी उसके लिए आवश्यक नहीं होता। जबकि उपबोधन में सभी संबद्ध कारकों को भली-भांति समझना अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। सलाह देने में, सलाहकार संबद्ध व्यक्ति के लिए आवश्यक निर्णय लेता है जबकि उपबोधन के अंतर्गत निर्णयन मुख्य रूप से उपबोधन प्राप्तकर्ता का ही संपूर्ण दायित्व होता है। इसलिए उपबोधक भी अपने सुझाए गए उपायों के लिए पूर्णतया उत्तरदायी होता है। छोटी-सी मुलाकात या किसी विशेष स्थिति के अंतर्गत सलाह दी जा सकती है लेकिन, जैसा कि उपबोधन के संदर्भ में देखा गया है, यह एक प्रक्रिया है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

5) बताइए निम्नलिखित कथन 'सही' हैं अथवा 'गलत'।

i) उपबोधन एक सतत् प्रक्रिया है।

ii) उपबोधन का उद्देश्य रोगी की मानसिक दशा में सुधार लाना है।

iii) उपबोधन के अंतर्गत उपबोधक और उपबोध्य में आकस्मिक संबंध स्थापित होता है।

iv) उपबोधक बनने के लिए, मूलभूत चिकित्सा पृष्ठभूमि का होना आवश्यक हैं।

v) निर्देशन और उपबोधन दोनों समानार्थक शब्द हैं।

vi) उपबोधन का एक उद्देश्य मुवक्किल के लिए निर्णय लेना है।

6) i) मनश्चिकित्सा और उपबोधन के बीच की दो समानताओं का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

ii) उपबोधन और अनुदेश के बीच का मुख्य अंतर कौन-सा है?

.....

.....

.....

.....

.....

iii) उपबोधन को परिभाषित कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

iv) सलाह देना किस प्रकार उपबोधन देने से भिन्न हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

1.6 उपबोधन के सिद्धांत

उपबोधन विभिन्न सिद्धांतों पर आधारित है। ये सिद्धांत हैं :

1) उपबोधन एक प्रक्रिया है और उपबोधक को इस प्रक्रिया की जानकारी भली-भांति होनी चाहिए। इसके ज्ञान के अभाव में निराशा ही हाथ लगती है।

2) उपबोधन कोई भी प्राप्त कर सकता है, विशेषतौर पर स्कूलों में सभी या किन्हीं विशेष समस्याओं से संबद्ध विद्यार्थी या कोई भी विशेष विद्यार्थी इसका लाभ उठा सकता है। जैसाकि हमने पहले बताया था, स्कूली जीवन में उपबोधन की प्रकृति उपचारी नहीं है बल्कि अधिक विकासात्मक और उपचारी है।

3) उपबोधन कुछ मूलभूत मान्यताओं पर आधारित है। ये हैं :

   क) इस जगत का हर मनुष्य अपना उत्तरदायित्व स्वयं निभाने में सक्षम है।

   ख) हर मनुष्य को लोकतंत्र के सिद्धांतों के आधार पर अपना रास्ता चुनने का अधिकार है।

4) उपबोधक आत्म-वरण के अधिकार से उपबोध्य को वंचित नहीं करता बल्कि उसकी रुचि से जुड़े कार्यों को सुगम बनाता है। उपबोधक को चाहिए कि यह उपबोध्य को उसी रूप में स्वीकार करे जैसा वह है, और उसका सम्मान करें।

5) उपबोधन से आशय सलाह देना नहीं है।

6) उपबोधन का अर्थ उपबोध्य के लिए चिंतन करना नहीं है बल्कि उसे इस योग्य बनाना है कि वह उचित चिंतन कर सके।

7) उपबोधन समस्या का समाधान करना नहीं है। उपबोधक का कार्य उपबोध्य की समस्या के समाधान में सहायता करना है।

8) उपबोधन से आशय साक्षात्कार करना नहीं है बल्कि सेवार्थी के साथ ऐसे बातचीत करना है जिससे वे अपने-आप को समझ सकें।

9) उपबोधक को व्यक्तिगत भिन्नताओं का निर्धारण करना चाहिए और इन्हें ध्यान में रखना चाहिए।

10) उपबोधक को चाहिए कि वह सेवार्थी की अभिवृत्ति आदि में ऐसे परिवर्तन लाए कि आत्म-आलोचना के साथ-साथ वह, किसी भी आलोचना का सामना कर सके।

11) उपबोधक मात्र एक संसाधक या उत्प्रेरक का कार्य करता है। वह ऐसा वातावरण तैयार करता है जो उन्मुक्त और सुरक्षित हो। वह अपने स्नेहपूर्ण व्यवहार से उपबोध्य के साथ ऐसा संबंध स्थापित करता है जिससे वह अपने दोषों को समझते हुए, बेहतर तरीके से आत्म-सुधार करता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

7) निम्नलिखित कथनों में से जो ठीक हैं उन पर सही (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) उपबोधक को उपबोध्य में अपनी सोच विकसित करने का प्रयास करना चाहिए।

ii) विद्यालय में उपबोधन ऐसे विद्यार्थियों को दिया जाता है जो समस्याओं से घिरे हों।

iii) उपबोधन देने के दौरान उपबोधक उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है।

iv) उपबोधन से आशय उपबोध्य के लिए सोच विकसित करना और निर्णयों का निर्धारण करना है।

8) उपबोधन की मूलभूत मान्यताओं का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.7 उपबोधन के प्रयोजन

कई विद्वानों का मानना है कि सभी बुराइयों को उपबोधन से दूर किया जा सकता है। लेकिन यह सत्य नहीं है। विभिन्न व्यक्तियों की इस संदर्भ में राय भी भिन्न-भिन्न है। अनेक बार उपबोधन के माध्यम से अवास्तविक कार्यों को पूरा किए जाने की आशा की जाती है। इसका मुख्य कारण उपबोधन का अर्थ भली-भांति न समझना है और इसी वजह से उपबोधन के वास्तविक लक्ष्यों की पहचान भी नहीं हो पाती। सामान्य तौर पर उपबोधक द्वारा उपबोधन के संदर्भ में स्वीकृत कुछ मुख्य लक्ष्य हैं :

1) **सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य की उपलब्धि**

कोई भी व्यक्ति मानसिक रूप से स्वस्थ तभी कहलाता है जब वह अन्य व्यक्तियों के साथ सार्थक सहसंबंध स्थापित करने और संतोषप्रद जीवन जीने के योग्य हो। मनुष्य ऐसा हो कि वह दूसरों को प्यार करे और दूसरे उसे प्यार कर सकें। उपबोधन का एक प्रयोजन व्यक्ति को इस अवस्था की प्राप्ति में सहायता करना है।

2) **समस्या-समाधान**

उपबोधन का दूसरा प्रयोजन, व्यक्ति को समस्या या कठिन परिस्थिति से बाहर निकालना है। लेकिन ध्यान रखें कि इस कार्य में उपबोधक को केवल व्यक्ति की सहायता करनी है, क्योंकि अंत में समस्याओं का समाधान व्यक्ति को स्वयं ही करना होता है।

3) **निर्णयन के लिए उपबोधन**

जीवन में सफल होने के लिए सही और समय पर निर्णय लेने की योग्यता अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है। उपबोधन का मुख्य उद्देश्य स्वतंत्र निर्णय लेने में व्यक्ति को सक्षम बनाना है। उपबोधक व्यक्ति के सही लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए आवश्यक जानकारी या उद्देश्य को स्पष्ट करके, उसकी सहायता कर सकता है लेकिन अंतिम निर्णय उपबोध्य को स्वयं लेने चाहिए।

4) **व्यक्तिगत प्रभाविता को सुधारना**

प्रभावी व्यक्ति वही है जो आवेग को नियंत्रित कर सके, सृजनात्मक ढंग से सोच सके और समस्याओं को पहचानने, सुस्पष्ट करने और हल करने में सक्षम हो। देखा गया है कि ये सभी लक्ष्य एक-दूसरे से जुड़े हैं। इन सभी की अलग पहचान होते हुए भी, ये परस्पर व्यापी है तथा अन्योन्याश्रित हैं।

5) **परिवर्तन के लिए सहायता करना**

विकास के लिए, परिवर्तन सदैव आवश्यक माना जाता है। व्यक्ति की मनोवृत्ति, विचारधारा या व्यक्तित्व में परिवर्तन लाने में उपबोधन सहायक होता है।

6) **व्यवहार परिवर्तन**

उपबोधन का अन्य उद्देश्य व्यवहार परिवर्तन में सहायता प्रदान करना है। प्रभावी और अच्छे समायोजन के लिए अवांछनीय व्यवहार या आत्मदोषी व्यवहार को दूर करना होगा और वांछनीय व्यवहार की प्राप्ति अति आवश्यक है। व्यवहारमूलक उपबोधक इस दृष्टिकोण के प्रमुख प्रतिपादक हैं।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

9) बताइए निम्नलिखित कथन सत्य है या असत्य।

i) उपबोधन का एक ध्येय अभिवृत्ति परिवर्तन करना है।

ii) सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ, शरीर में मानसिक रोग का न होना है।

10) उपबोधन के तीन लक्ष्यों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.8 उपबोधन के प्रमुख उपागम

कोई भी व्यवसाय कुछ निश्चित धारणाओं और मान्यताओं पर आधारित होता है और सामान्यतौर पर इन्हें सिद्धांत कहा जाता है। उपबोधन भी इसका अपवाद नहीं है। यद्यपि उपबोधन के क्षेत्र में, विभिन्न विस्तृत सिद्धांतों को प्रस्तुत किया गया है, फिर भी किसी एक सिद्धांत से उपबोधन के सभी पहलुओं पर प्रकाश नहीं डाला जा सकता। इसलिए उपागम (शब्द) को सभी ने स्वीकारा है क्योंकि यह अपेक्षाकृत अधिक व्यापक शब्द है।

उपागम उपबोधन प्रक्रिया के लिए एक संगत परिभाषा प्रदान करता है जिसमें उपबोधन लक्ष्यों का स्पष्ट कथन तथा उपबोधन तकनीक विशेष के चयन का तर्काधार भी सम्मिलित होता है।

उपबोधन के तीन प्रमुख उपागम हैं : निदेशात्मक उपागम, अनिदेशात्मक उपागम और संकलनात्मक उपागम।

1.8.1 निदेशात्मक उपागम

जैसा कि नाम में ही निहित है, यह उपागम उपबोधक की अधिक सक्रिय भूमिका को उजागर करता है। उपबोधक निदेशन की विभिन्न विधियों के प्रयोग द्वारा उपबोध्य को सहायता प्रदान करता है ताकि वह सही समाधान खोजने में सफल हो सकें। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक निदान में अपने विशिष्ट ज्ञान, अनुभव और आँकड़ों की व्याख्या के द्वारा उपबोधक अपने उपबोध्य को संबद्ध समस्याओं के शीघ्र उपचार में सहायता प्रदान करता है।

इस उपागम के प्रतिपादक, ई.जी. लियमसन् के अनुसार, ''उपबोधक द्वारा दिए जाने वाले निर्देशन की आवश्यकता, उपबोध्य व्यक्ति की स्व-नियमन (self-regulation) की क्षमताओं के विलोमानुपाती होती है।'' यद्यपि जैसे-जैसे उपबोधन प्रक्रिया आगे बढ़ती है, समस्या को सुलझाने का मुख्य उत्तरदायित्व उपबोधक का ही होता है, लेकिन उपबोध्य को भी समस्या का हल खोजने के प्रति अधिकाधिक प्रोत्साहित किया जाता है ताकि वह आत्म-निर्देशन का

अधिक दायित्व स्वयं ले सके। यह उपागम उपबोध्य और उपबोधक के मध्य एक अधिक वैयक्तिक संबंध की अपेक्षा रखता है। इसके लिए उपबोधक उपबोध्य के साथ मनोवैज्ञानिक तादात्मय स्थापित करने का प्रयत्न करता है ताकि वह उपबोध्य को गहन रूप से समझ सके।

उपबोधन के चरण

निदेशात्मक उपबोधन के छः चरण हैं। ये हैं :

क) **विश्लेषण**

इसके अंतर्गत उपबोध्य को भली-भांति समझने के लिए उससे जुड़े विभिन्न स्रोतों के आँकड़े इकट्ठे किए जाते हैं। इसमें मनोवैज्ञानिक परीक्षणों आदि का संचालन सम्मिलित होता है। तथापि इस प्रकार के परीक्षण और अन्य औपचारिकताएँ उन दोनों के संबंधों में बाधक नहीं बननी चाहिए। इसका महत्त्व उस सीमा तक ही हो जिस सीमा तक एक उपबोधक अपने उपबोध्य को भली-भांति समझ सके।

ख) **संश्लेषण**

इसका अर्थ प्राप्त किए आँकड़ों के संक्षेपण और उसे संगठित करने से है जिससे उपबोध्य के गुणों, दायित्वों, समायोजनों और कुसमायोजनों आदि का पता लगाया जा सके। इन आँकड़ों में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों से प्राप्त आँकड़ों को भी शामिल किया जाता है।

ग) **निदान**

इस चरण में ऐसे निष्कर्षों को सूत्रबद्ध किया जाता है जो विद्यार्थियों द्वारा दर्शाई जाने वाली समस्याओं और उनकी प्रकृति पर आधारित होते हैं। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों और प्रश्नावली आदि के परिणामों के आधार पर ऐसे निष्कर्ष प्राप्त किए जाते हैं।

घ) **प्राज्ञान**

इसके अंतर्गत उपयुक्त निष्कर्षों के आधार पर विद्यार्थी की समस्या के भावी (संभावित) समाधानों को उजागर किया जाता है।

च) **उपबोधन**

समूची प्रक्रिया में उपबोधन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण चरण है जिसमें काफी समय लगता है। यह ऐसा पहलू है जहाँ उपबोधक की विषय विशेषज्ञता सर्वाधिक अपेक्षित होती है। यह अत्यंत व्यक्तिगत अध्यापन-अधिगम प्रक्रिया है। यह ऐसा प्रत्यक्ष शिक्षण हो सकता है जो विद्यार्थी की समस्याओं को उज़ागर करने के लिए सुस्पष्ट व्याख्या करके और विद्यार्थी की मनोवृत्ति, रुचि आदि की खोज करने में भी सहायता प्रदान करके दिया जा सकता है। कई बार उपबोधक अपने उपबोध्य से मैत्रीपूर्ण रूप में बातचीत करता है। इसमें प्रायोगिक सत्र भी शामिल हो सकते हैं जहाँ उपबोधक के स्नेहपूर्ण व्यवहार से उपबोध्य अपने अंतिम लक्ष्य को भली-भांति समझ पाता है। अतः अपनी सक्षमताओं और परिस्थितियों के आधार पर उपबोध्य एक निश्चित सीमा तक आत्म-संचालन के योग्य हो जाता है। इस प्रकार से प्राप्त सफलता उसके सफल व्यवहारों को प्रबलित करती है जिसके फलस्वरूप वह जीवन में एक समायोजित जीवन-शैली स्थापित कर लेता है।

अतः उपबोधन में शामिल हैं– (क) विद्यार्थी की आत्म-मूल्यांकन में सहायता करना अर्थात् विद्यार्थी की अभिरुचियों, क्षमताओं और उद्देश्यों को पहचानना; (ख) विद्यार्थी की इस प्रकार सहायता करना जिससे विद्यार्थी अपनी अभिनिर्धारित क्षमताओं और योग्यताओं का सदुपयोग कर एक कार्य योजना बना सके; और (ग) अंत में अनुकूली जीवन-शैली का निर्माण करना।

उपबोध्य को आत्म-मूल्यांकन में सहायता करने के लिए दो प्रकार के आँकड़े आवश्यक हैं– स्वप्रेक्षित आंकड़े और बाह्य मूल्यांकन से प्राप्त आंकड़े। कुछ प्रकार की जानकारी का सर्वोत्तम माध्यम उपबोध्य स्वयं ही होता है। परंतु विश्लेषण और नैदानिक सूत्रों से प्राप्त जानकारी को उपबोधक को स्वयं प्रेषित करना चाहिए। परंतु उपबोध्य को कुल ज्ञान देना चाहिए लेकिन इस कार्य में उसे सावधानी बरतनी चाहिए कि वह उपबोध्य को आभास न हो कि वे दोनों ही अज्ञानता की समान अवस्था में हैं। उपबोधक को विश्लेषण/निदान आदि से संबद्ध चरणों की विस्तृत जानकारी उपबोध्य को नहीं देनी चाहिए। हाँ, उसे समग्र प्रक्रिया से अवगत अवश्य कराया जाना चाहिए। उपबोधक का व्यवहार हठधर्मी नहीं होना चाहिए, परंतु सैद्धांतिक ज्ञान, अनुभव और निर्णयन के आधार पर उपबोध्य की सहायता करनी चाहिए। यदि उपबोधक दर्शाता है कि यह निर्णय लेने में सक्षम नहीं है तो वह उपबोध्य का विश्वास, प्राप्त नहीं कर सकेगा। उसे लगातार चर्चा करते रहना चाहिए। इसके लिए उपबोधक को समय-समय पर उपबोध्य के मुख और चेहरे के हाव-भाव से संकेत लेने चाहिए। इस प्रकार उपबोधक तथा उपबोध्य के मध्य सहयोग स्थापित होना चाहिए ताकि मामले की वैध व्याख्या की जा सके तथा अनुकूल व्यवहार परिवर्तन का प्रभावी कार्यक्रम बनाया जा सके।

छ) **अनुवर्तनः** यह चरण निदेशात्मक उपबोधन का अत्यंत महत्त्वपूर्ण चरण है। हो सकता है, अभी उपबोध्य अपने उपबोधक की सहायता से समस्या को हल कर लें। तथापि अनुवर्तन की आवश्यकता यह सुनिश्चित करने के लिए है कि यदि कोई नई समस्या आती है या पिछली समस्या पुनः आती है तो उपबोध्य इस स्थिति से निपटने योग्य हुआ है या नहीं। उपबोध्य द्वारा उपबोधक से उसकी शक्ति और रुचियों को जानने और जीवन में आगे बढ़ने में मदद करनी होगी।

1.8.2 अनिदेशात्मक उपागम

इस उपागम में उपबोधक ऐसा वातावरण प्रदान करता है जिसमें सेवार्थी बिना किसी भय या दबाव के पूर्णतया मुक्त अवस्था में अपने विचारों और अनुभूतियों की खोज करता है। उपबोध्य को उसकी क्षमताओं से अवगत करा कर उपबोधक उत्प्रेरक का कार्य करता है। इस उपागम में आँकड़ों का स्रोत उपबोध्य स्वयं होता है और व्यवहार में बदलाव लाने का अंतिम उत्तरदायित्व उपबोधक की बजाए सेवार्थी का होता है। उपबोधक को इतना निष्क्रिय भी नहीं होना चाहिए कि उपबोध्य/सेवार्थी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयास करना बंद कर दें और उपबोधक को इतना सक्रिय भी नहीं होना चाहिए कि सेवार्थी की बजाए उपबोधक स्वयं मुख्य केंद्र बन जाए।

केंद्रीय परिकल्पनाएँ

कार्ल रोजर्स– जो सेवार्थी केंद्रित उपागम के प्रतिपादक हुए हैं, ने केंद्रीय परिकल्पना को इस प्रकार सूत्रबद्ध किया है :

क) व्यक्ति के भीतर कुछ ऐसी प्रच्छन्न क्षमता होती है जिससे अवगत होने पर वह अपने उन पक्षों को समझ सकता है जो उसके असंतोष, दुश्चिंता तथा कष्ट का कारण बनते

हैं। इसके अतिरिक्त वह क्षमता भी होती है जिससे वह अपने-आपको पहचान सकता है तथा जीवन के साथ अपने संबंधों को स्वानुभूति और परिपक्वता की दिशा में ले जा सकता है तथा इसके फलस्वरूप उसे आंतरिक सुख का आभास होता है।

ख) इस क्षमता का आभास तब होगा, जब मनोचिकित्सक ऐसा मनोवैज्ञानिक पर्यावरण निर्मित करें जिसमें सेवार्थी को एक अप्रतिबंधित सार्थक मानव के रूप में स्वीकारा जा सके, जिसमें उसकी वर्तमान भावनाओं तथा संप्रेषणों को समझने का एक निरंतर संवेदनशील प्रयास संभव हो, तथा इस तद्नुभूतिक बोध को उपबोध्य तक पहुँचाने का एक सतत् प्रयास किया जाए।

ग) इसके आगे यह परिकल्पना की गई है कि इस प्रकार के सौहार्दपूर्ण और भयरहित वातावरण में उपबोध्य स्वयं को पुनःसंगठित कर सकेगा।

घ) इस प्रकार उपबोध्य के साथ चिकित्सापरक संबंधों से प्राप्त समायोजित जीवन-शैली वास्तविक जीवन में भी समस्त रूप में सामान्यीकृत (लागू) हो जाएगी।

अतः इस सिद्धांत का मुख्याधार है कि उपबोधन स्थिति के सौहार्दपूर्ण व स्वीकार्य वातावरण में सेवार्थी अपने स्व और अनुभूति के मध्य गलत धारणाओं तथा असंगतताओं को ठीक करने में सक्षम हो जाता है। उपबोधक में कुछ ऐसे व्यक्तिगत गुण होने चाहिए– जैसे संगतता (उपबोधक सही और संपूर्ण व्यक्ति होता है), अप्रतिबंधित सकारात्मक आदर (उपबोधक की ऐसी अभिवृत्ति जहाँ उपबोध्य के विचारों, भावनाओं या व्यवहार को बिना अच्छा या बुरा मूल्यांकित किए स्वीकार कर लिया जाता है) तथा तद्नुभूति (उपबोधक की वह योग्यता जिसके द्वारा वह उपबोध्य के संसार को जान लेता है या वैसा ही अनुभव करता है जैसा उपबोध्य अनुभव करता है)।

तथापि वह सिद्धांत उपबोधक में कुछ विशेष गुणों के होने को कम महत्त्व देता है– जैसे कि उसका व्यवहारकुशल होना और समस्या निवारण तकनीकों या विकासात्मक प्रक्रियाओं में निपुण होना। इसके अतिरिक्त रोजर्स ने निदान परीक्षण या ऐसे अन्य तकनीकों के प्रयोग को यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि इनके द्वारा सेवार्थी की स्वाभाविक वृद्धि में बाधा पड़ती है। इसके बजाए वह इस बात पर बल देता है कि उपबोधक को चाहिए कि वह उपबोध्य की बातों को ध्यान से सुनें, उनका अर्थ निकाले उसकी टिप्पणियों पर विचार करें, न कि सीधे प्रश्न करें या व्याख्या करें।

1.8.3 संकल्पनात्मक उपागम

इस उपागम के अंतर्गत उपबोधक विभिन्न उपलब्ध दृष्टिकोणों से प्राप्त संकल्पनाओं के आधार पर उपबोधन प्रदान करता है। वह विशिष्ट सैद्धांतिक अध्ययन का विशेष रूप से अनुसरण नहीं करता बल्कि किसी विशेष विचारधारा पर जोर न देते हुए ऐसी कार्यप्रणाली और तकनीकों का प्रयोग करता है, जो उसकी राय में किसी भी विशेष उपबोध्य के मामले में सर्वाधिक प्रभावी है।

एफ.सी. थॉर्न के अनुसार, ''संकलनवाद, उपबोधन के क्षेत्र में सर्वाधिक व्यवहार्य और उपयुक्त उपागम है क्योंकि जिस प्रकार किन्हीं दो व्यक्तियों को समतुल्य नहीं माना जा सकता, उसी प्रकार से व्यक्तित्व के किसी एक सिद्धांत के माध्यम से व्यक्तियों के विभिन्न व्यवहारमूलक प्रतिरूपों की व्याख्या नहीं की जा सकती। इसी प्रकार से, हर समस्या अपने-आप में अनोखी होती है और हर मामले में प्रयुक्त तकनीक या उपागम भी आवश्यक नहीं है कि किसी दूसरे मामले में भी समान रूप से प्रभावी हो। इसलिए अलग-अलग मामलों की प्रकृति के अनुसार

उपागम का अनुप्रयोग किया जाता है और संकलनवाद इस विचारधारा को सहमति प्रदान करता है।''

संकलनवादी दृष्टिकोण बताने में थॉर्न द्वारा 'समन्वित मनोचिकित्सा' शब्द का प्रतिपादन किया गया। थार्न का सैद्धाांतिक आधार निम्नलिखित पूर्वधारणाओं पर आधारित है :

i) सभी मनोवैज्ञानिक स्थितियाँ, समाकलन की विसंगतियों के उदाहरण हैं और मनोवैज्ञानिक उपबोधन का लक्ष्य इस समाकलन प्रक्रिया को सुदृढ़ करना है ताकि आत्म-अभिव्यक्ति के उच्चस्तरों को विकसित किया जा सके। अतः वर्तमान वास्तविक स्थिति में व्यक्ति ही केंद्र बिंदु होता है।

ii) चिकित्सक के लिए पता लगाना आवश्यक है कि जीवन से जुड़े उत्तरदायित्वों को निभाने में क्या उपबोध्य के पास आवश्यक संसाधन हैं या नहीं।

iii) यदि चिकित्सक संतुष्ट हो जाता है तो वह उपबोध्य को कुछ रोज़ाना के कार्य शुरू करने का उत्तरदायित्व सौंप देता है।

iv) चिकित्सा के अधीन उपबोध्य को इस प्रकार प्रशिक्षित किया जाता है जिससे वह स्वयं को संचालित करने के आवश्यक कौशल सीख सके।

थॉर्न ने मनोचिकित्सा की बजाए ''मनोवैज्ञानिक तरीके से मामले को सुलझाना/निपटना'' पदांश का प्रयोग किया है और इस प्रक्रिया में निम्नलिखित चरण शामिल हैं :

क) सेवार्थी की समस्याओं की विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए क्रमबद्ध विश्लेषण/निदान।

ख) उपबोधन की विभिन्न विधियों को उनके गुण और दोष के आधार पर समझना।

ग) लक्षणों की तुलना में अन्तर्निहित कारणों पर अधिक ध्यान देना।

घ) उपबोध्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए, विशिष्ट विधि चुनना।

च) प्राप्त परिणामों के आधार पर विधि का मूल्यांकन।

छ) वैज्ञानिक तरीके से आँकड़ों का विश्लेषण और परिणाम का मूल्यांकन करना।

आरनोल्ड लेजारस द्वारा प्रतिपादित 'बहुविधा (बहुरूपात्मक) चिकित्सा' संकलनात्मक उपागम का अन्य उदाहरण है। इसके अनुसार व्यक्तित्व प्रकार्यों के सात प्रमुख क्षेत्र हैं : (1) व्यवहार (अवलोकनीय कार्यवाही), (2) भावात्मक (संवेगात्मक), (3) संवेदन (भावनाएँ), (4) बिंब (कल्पनाशक्ति), (5) संज्ञान (चिंतन प्रक्रिया), (6) अंतःवैयक्तिक संबंध (सामाजिक), और (7) औषध/जैविक (भौतिक)। इन सभी विशेषताओं को शामिल करने में आरनोल्ड ने आधारभूत पहचान पत्र (Basic ID) परिवर्णी शब्द (acronym) का प्रयोग किया।

इस उपागम का महत्त्वपूर्ण लक्षण है कि हर व्यक्ति अपने आधारभूत पहचान पत्र (Basic ID) के संदर्भ में अद्वितीय है। इसकी यह धारणा है कि दुरनुकूलित व्यवहार गलत अधिगम का परिणाम है और उपबोधन का लक्ष्य सेवार्थी में वांछित परिवर्तन लाना है जो चिरस्थायी हों और जिन्हें प्रभावकारी और मानवोचित ढंग से पूरा किया जा सके।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

11) निम्नलिखित कथनों में जो सही है उन पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का प्रयोग अनिदेशात्मक उपबोधन में किया जाता है।

ii) उपबोधन में संकल्पनात्मक उपागम से आशय सफलता मिलने तक एक के बाद एक उपागम का प्रयोग करते रहना है।

iii) निदान निदेशात्मक उपबोधन का चरण है।

iv) अनिदेशात्मक उपबोधन में, उपबोधक की भूमिका मुख्य नहीं होती।

12) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

i) ..... अनिदेशात्मक उपबोधन उपागम के प्रतिपादक हैं।

ii) समाकलित मनोविज्ञान शब्द का प्रतिपादन ..... ने उपबोधन के लिए अपने ..... उपागम की व्याख्या के लिए किया था।

13) i) निदेशात्मक उपबोधन में शामिल चरणों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

ii) बहुविधा (बहुरूपात्मक) चिकित्सा से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

1.9 उपबोधन प्रक्रिया

उपबोधन का आरंभ किसी उपबोध्य विशेष से उसके जीवनवृत्त से संबंधित प्रश्नावली को भरवा कर किया जाता है। इस प्रक्रिया में शामिल हैं, पुनर्बलन से जुड़ी कार्यप्रणाली, आग्रही (निश्चयात्मक) प्रशिक्षण, विसंवेदनीकरण प्रतिपुष्टि और संज्ञानात्मक पुनर्रचना– विशेष रूप से व्यवसायों में, भावात्मक और संज्ञानात्मक विधाएं। भौतिक और काल्पनिक विधाओं में, उपबोधक गेस्टाल्ट और अन्य समग्र तकनीकों का प्रयोग करता है। जैसे खाली कुर्सी में भूमिका प्रतिवर्ती संवाद बोलना, आमना-सामना, पेट से सांस लेना, सकारात्मक प्रतिबिंबन, चित्रण और फोकसन। अंतःवैयक्तिक विधाओं में आत्म-प्रबंधन (instruction in parenting) और सामाजिक कौशलों का प्रयोग किया गया है।

संवृत्तिक रूप में उपबोधन का संबंध सदैव दूसरों की सहायता करने से है, चाहे यह किसी भी संदर्भ में प्रयुक्त किया गया हो। लेकिन यहाँ इसका उपयुक्त अर्थ और भी सार्थक है। क्योंकि विशेष समस्या की बजाए समग्र व्यक्ति हमारे ध्यान का केंद्र बिंदु है।

उपबोधन का सर्वश्रेष्ठ वर्णन एक प्रक्रिया के रूप में हो सकता है। इसका अर्थ है कि उपबोधन में कुछ निश्चित समय अवधि में अभिज्ञेय (पहचान योग्य) घटनाओं का अनुक्रम शामिल होता है। लिया गया समय, घटनाओं का अनुक्रम, अंतर्निहित गति के अन्वेषण की प्रकृति और विस्तार आदि अलग-अलग व्यक्तियों में भिन्न होते हैं। तथापि ऐसे कुछ बुनियादी चरण हैं जो इस प्रकार की उपबोधन प्रक्रियाओं का अनिवार्य भाग होते हैं। ऐसे चरणों के विस्तार में जाने से पहले, आइए इनसे जुड़ी कुछ अवधारणाओं से अवगत हों।

1.9.1 अवधारणाएँ

तत्परता

सेवार्थियों को मुख्य रूप से दो व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है। पहली श्रेणी में वे सेवार्थी शामिल होते हैं जो स्वैच्छिक रूप से सहायता चाहते हैं, और दूसरी श्रेणी में वे सेवार्थी आते हैं जो विशेष रूप से किसी व्यक्ति अथवा संस्था द्वारा भेजे जाते हैं। मामला चाहे जैसा भी हो, उपबोधन में यह पूर्वधारणा होती है कि सेवार्थी उपबोधन चाहता है, जिसके कारण वह सहायता के लिए आ रहा है। इस इच्छा को 'तत्परता' कहा जाता है।

प्रतिसंकल्प

लोग प्रायः सहायता माँगने और इसे स्वीकारने में कठिनाई अनुभव करते हैं क्योंकि कुछ मामलों में वे परिवर्तन के परिणामों का सामना करने में कुछ अनिच्छुक होते हैं और कुछ के लिए सहायता लेने का अर्थ असफलता को स्वीकारना है। इसी तरह कुछ अनुभव करते हैं कि उन्हें सहायता की आवश्यकता नहीं है और इसी वजह से उनकी सहायता न की जाए। इस प्रकार की नकारात्मक भावना जो सहायता लेने से व्यक्ति को रोकती है 'प्रतिसंकल्प' कहलाती है।

व्यक्तिवृत्त

इस क्षेत्र में व्यक्तिवृत्त शब्द का प्रयोग अक्सर होता है। व्यक्तिवृत्त से आशय उपबोध्य के वर्तमान और पिछले जीवन से जुड़े तथ्यों का सुव्यवस्थित संग्रह है। लेकिन उपबोधक के सैद्धांतिक अभिविन्यासों के साथ ध्यान का केंद्र भी परिवर्तित होता रहता है– जैसे मनोवैश्लेषिक रूप से अभिविन्यासित उपबोधक बचपन से जुड़े संगत अनुभवों को ध्यान में रखकर कार्य करता है।

सौहार्द

उपबोधन में सौहार्द को जितना महत्त्वपूर्ण समझें, कम रहेगा। यह उपबोधक द्वारा निर्मित ऐसा मैत्रीपूर्ण और अनुकूल वातावरण (माहौल/स्थिति) है जो प्रभावी उपबोधन संबंधों के निर्माण में उत्प्रेरक है। सौहार्द स्थापित करने में मुख्य रूप से स्नेहपूर्ण संबंधों का माधुर्य, उपबोधक के प्रति इस स्नेह की अभिव्यक्ति और विश्वास की अनुभूति– जो बिना शर्त वाली स्वीकृति से विकसित होती है, अत्यंत महत्त्वपूर्ण कारक हैं। उपबोध्य को बुलाने के लिए स्वयं उठ कर जाना, उससे स्नेहपूर्ण ढंग से मिलना, उसे आराम से बिठाना और आरंभ में समस्या से उसका ध्यान हटाना आदि ऐसी तकनीकें हैं जिन्हें उपबोधन के आरंभिक चरण में इस्तेमाल किया जा सकता है।

अन्यारोपण

इसका संबंध उपबोध्य द्वारा उपबोधक यानी चिकित्सक के समक्ष उन संवेगों का अन्यारोपण अर्थात् अभिव्यक्ति से है जो उसने अपने जीवन के आरंभिक काल में अनुभव किए थे। उपबोधन स्थितियों में ऐसी अभिव्यक्ति काफी स्वाभाविक है क्योंकि उपबोध्य उपबोधक पर

विश्वास करता है और अपनी भावनाओं और संवेदनाओं को खुलकर अभिव्यक्त करने के लिए उसे प्रेरित भी किया जाता है। उपबोधक को इन भावनाओं का आदर करना चाहिए और इन्हें चिकित्सीय रूप में संचालित करना चाहिए ताकि संबंध विच्छेद न होने पाएं।

प्रति-अन्यारोपण

यह स्थिति उस समय घटित होती है जबकि चिकित्सक अपने अनसुलझे द्वंद्वों को उपबोध्य को दर्शा देते हैं, उपबोधक, उपबोध्य के साथ असुविधा महससू करने लगते हैं या क्रोध, रोष आदि विवेकहीन (अविवेकी) स्थिति का अनुभव करते हैं या वे खुद उपबोध्य पर निर्भर करना शुरू कर देते हैं या अपने उपबोध्य की समस्या (दुविधा) में अतिभावुकतापूर्ण ढंग से सम्मिलित हो जाते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि प्रति-अन्यारोपण में ऐसी भावनाएँ स्थायी हो जाती हैं जो उपबोधक के लिए उचित नहीं है। यदि उपबोधक द्वारा दिए गए तर्कों से भी स्थिति नहीं सुधरती है तो उपबोधक को स्वयं के लिए किसी संवृत्तिक की सहायता लेनी चाहिए।

प्रतिरोध

इस अवस्था में उपबोध्य उपबोधक द्वारा निर्धारित किए गए लक्ष्यों की दिशा में किए जाने वाले प्रयासों का प्रतिरोध करता है। हाल की प्रवृत्तियों से पता चलता है कि प्रतिरोध उपबोधन प्रक्रिया का अपेक्षित अंग है और उपबोधक के परिणामों पर इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। प्रतिरोध का विस्तार शत्रुतापूर्ण व्यवहार से आरंभ करते हुए निष्क्रिय रूप से प्रतिरोध करने तक है जैसे चिकित्सक को मिलने के लिए जानबूझ कर देरी से पहुँचना आदि।

1.9.2 सोपान/अवस्थाएँ

उपबोधन प्रक्रिया कुछ विशेष अवस्थाओं से होकर गुजरती है और इन्हें मुख्यतः निम्नलिखित अवस्थाओं में वर्गीकृत किया जा सकता है :

1) **प्रारंभिक सोपान (अवस्था) : उपबोध्य द्वारा आत्म-अन्वेषण**

प्रारंभिक चरण में उपबोध्यों को आत्म-अन्वेषण के लिए प्रेरित किया जाता है ताकि वे अपने-आपको भली-भांति समझने का प्रयास करें और अपने उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से समझ सकें। सामान्य उपबोधन लक्ष्य निश्चित किए जाते हैं और इसी के अनुरूप वातावरण भी तैयार किया जाता है। इसी प्रकार से उपबोध्य की प्रकृति और समस्या की जटिलता को ध्यानपूर्वक समझते हुए और एकत्रित जानकारी के आधार पर, उपबोधक किसी अस्थायी परिकल्पना (निर्णय) तक पहुँचता है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण, प्रश्नावलियों और अन्य सूचियों– जैसे आकलन साधन इन निर्णयों में मदद करते हैं।

प्रारंभिक अवस्था को दो उप-भागों में विभाजित किया जाता है – (क) पहली मुलाकात और (ख) प्रारंभिक उपबोधन सत्र।

क) **पहली मुलाकात :** इसका मूल उद्देश्य उपबोधक और उपबोध्य के बीच मधुर कार्यकारी संबंध की नींव स्थापित करना है ताकि एक-दूसरे को समझते हुए समस्या का निवारण किया जा सके। यह अत्यंत चुनौतीपूर्ण अवस्था मानी जाती है क्योंकि जब सेवार्थी इस अवस्था में उपबोधक के पास पहुँचता है तो उस समय वह अनिश्चित और दुविधाभरी भावनाओं से ओत-प्रोत होता है। इसलिए उपबोधक बातचीत द्वारा, मुख के हाव-भावों और अपने समग्र व्यवहार के माध्यम से अपने सेवार्थी को दर्शाता है कि वह उसे भली-भाँति समझ रहा है और उसकी समस्या का निवारण वह पूरी लगन से करेगा। लेकिन ऐसे संबंध स्थापित करने

में उसे कुछ निश्चित शिष्टाचार को ध्यान में रखना पड़ता है– जैसे खुद उठ कर उपबोध्य को आरामदायक स्थिति में बिठाना, बातचीत के दौरान फोन की घंटी पर ध्यान न देना आदि। ऐसी पहली मुलाकात के दौरान उपबोधक को यह सोचने की आवश्यकता होती है कि क्या वह उपबोध्य की समस्या को हल करने में सक्षम है। यदि नहीं, तो सेवार्थी को किसी उचित व्यावसायिक एजेंसी में भेजना आवश्यक हो जाता है। सेवार्थी को भी इस तथ्य के प्रति जागरूक कराना चाहिए कि उपबोधन के उपरांत वह क्या प्राप्त करेगा और वह खुद क्या आशा रखता है। इसी प्रकार से गोपनीयता, निजता-अधिकार, अन्य नैतिक और कानूनी बातों को भी भली-भाँति स्पष्ट कर लेना चाहिए। इस अवस्था के दौरान सत्रों की लंबाई (समय-सीमा), शुल्क का भुगतान, आपसी समझ के आधार पर मिलने का समय तय करना आदि बातों को भी पहले से ही स्पष्ट कर लेना चाहिए।

ख) **प्रारंभिक उपबोधन सत्र :** इसके दौरान उपबोधक अधिकांश समय में बिना कोई अनावश्यक प्रश्न पूछते हुए सेवार्थी की बातों को ध्यान से सुनता है और उसे अपने विचारों को खुलकर कहने के लिए प्रेरित करता है। अतः सेवार्थी को ध्यानपूर्वक सुनकर, सेवार्थी की बात पर ध्यान देकर, उसके शारीरिक व्यवहारों और अन्य प्रतिक्रियाओं पर ध्यान देते हुए उपबोधक पूरी जानकारी प्राप्त करता है। यदि सेवार्थी विचारों को अभिव्यक्त करने में सक्षम नहीं है तो साधारण शब्दों के माध्यम से जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

2) मध्यम अवस्था : गहन अन्वेषण और विश्लेषण

इस चरण में उपबोधक अपने सेवार्थी की बाहरी समस्याओं से हटकर भीतरी समस्याओं की ओर ध्यान केंद्रित करता है अर्थात् प्राथमिक संज्ञानात्मक स्तर से संवेगात्मक स्तर की ओर बढ़ना। इस स्तर पर उपबोध्य क्रमशः अपनी भावनाओं को उजागर करता है। वह अपने सेवार्थी को अधिक गहराई से समझने का प्रयास करता है, कभी-कभी विरोधात्मक रुख भी अपनाता है, उसकी टिप्पणियों की कठोर व्याख्या करता है आदि। इस बिंदु पर कुछ उपबोधक अपने उपबोध्यों के बौद्धिक या व्यक्तित्व कार्यशीलता को समझने में कुछ विशेष परीक्षणों का प्रयोग भी करते हैं। अतः जैसे-जैसे उपबोध्य अपनी समस्याओं को खुलकर अभिव्यक्त करता है, उसमें जागरूकता उत्पन्न होती है, उपबोधक और उपबोध्यों के बीच अन्यारोपण, प्रति-अन्यारोपण, प्रतिरोध आदि जैसी संवेगात्मक अंतःक्रिया विकसित होनी शुरू हो जाती हैं। यद्यपि मनोविश्लेषक विशेषज्ञ इस बात से सहमत हैं कि सभी उपबोधन संबंधों में यह एक सार्विक परिघटना है।

3) अंतिम अवस्था : कार्य योजना के माध्यम से लक्ष्यों का कार्यान्वयन

इस अवस्था तक पहुँच कर, उपबोध्य यथार्थ स्तर पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करना आरंभ कर देते हैं। वे पहले की अपेक्षा अपने प्रति अधिक जागरूक और स्वाभाविक हो जाते हैं और रोज़ाना के जीवन में इस समझ का प्रयोग भी आरंभ कर देते हैं। यह ऐसी अवस्था है जहाँ नई समझ को रचनात्मक रूप दिया जाता है। जोर व्यावहारिक परिवर्तन पर होता है। व्यवहार, मनोवृत्ति और कौशल प्रारंभिक अवस्था के विशिष्ट लक्ष्य होने चाहिए। जो उपबोध्य निर्णय लेने में देरी करते हैं, उनका उपचार भूमिका अभिनय द्वारा या पूर्वाभ्यास, स्वाग्रहिता प्रशिक्षण आदि जैसी विशेष कार्यनीतियों द्वारा किया जाता है।

4) **समाप्ति**

यदि पहले से निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हो जाती है तो उपबोधन समाप्ति की अवस्था में पहुँचते हैं। यदि उपबोधक समझता है कि समस्या का समाधान हो गया है तो वह प्रत्यक्ष रूप से मुद्दे पर प्रकाश डाल सकता है। या यदि सेवार्थी सुनिश्चित हो गया है कि समस्या दूर हो चुकी है तो वह उपबोधन समाप्ति की घोषणा कर सकता है। लेकिन इस कार्य में उपबोधक को पूर्ण रूप से सचेत रहना चाहिए कि प्रगति रोध के अभाव में तो उपबोध्य कहीं समाप्ति की घोषणा नहीं कर रहा। उसे इस ओर भी सचेत रहना चाहिए कि उपबोध्य द्वारा समाप्ति की घोषणा कहीं प्रतिरोध का प्रतीक तो नहीं है। यदि ऐसा हो तो स्थिति को ध्यानपूर्वक संभालना चाहिए।

यदि समाप्ति यथोचित है तो उपबोधक को अंतिम कुछ सत्रों में उपबोध्य को अपनी निर्भरता से मुक्त करने का भरसक प्रयास करना चाहिए। ऐसी स्थिति में उपबोध्य में प्रायः लक्षण पुनः आ सकते हैं तथा घबराहट, उत्सुकता, चिंता आदि का अनुभव हो सकता है। जब उपबोधक सफलतापूर्वक अपना कार्य पूरा करता है तो वह उपबोधन के मुख्य लक्ष्य की प्राप्ति भली-भाँति कर लेता है और जीवन के अगले अध्याय से जुड़े नए अधिगम पर ध्यान केंद्रित करता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

14) निम्नलिखित कथनों में जो सही है उन पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) उपबोधन एक प्रक्रिया है क्योंकि यह मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के उपयोग से संबद्ध है।

ii) उपबोधन के दौरान उपबोध्य के साथ भावुक हो जाना या उस पर निर्भर करना, उपबोधक के लिए उचित है।

iii) पहली मुलाकात का मुख्य उद्देश्य सौहार्द स्थापित करना है।

15) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

नकारात्मक सोच जो व्यक्ति को उपबोधक से सहायता प्राप्त करने से रोकता है, ... कहलाता है।

16) i) उपबोधन के संदर्भ में प्रतिरोध से क्या आशय है?

.....

.....

.....

.....

ii) प्रति-अन्यारोपण से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

1.10 शिक्षा में निर्देशन और उपबोधन

निर्देशन सेवाएं पूर्ण शैक्षिक कार्यक्रम का अभिन्न अंग हैं।

काफी पहले ''निर्देशन सेवाओं को विद्यालय पद्धति में विस्तार कार्यकलाप माना जाता था।'' इसे विद्यालयों के लिए बिल्कुल अनावश्यक और अनुपयुक्त समझा जाता था। फिर भी शिक्षकों और जनप्रतिनिधियों द्वारा विस्तृत और उपयुक्त मूल्यांकनों द्वारा निर्देशन सेवाओं को स्वीकार कर लिया गया है। इसे बाहर से नहीं जोड़ा गया है बल्कि शैक्षिक प्रक्रिया के लिए प्रमुख और अनिवार्य माना गया है।

यह कहना कि निर्देशन सेवाएँ पूरे शैक्षिक प्रयास का मुख्य और अभिन्न अंग हैं, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि ये सेवाएँ अध्यापन अथवा प्रशासन के समरूप हैं अथवा इनका स्थान ले सकती हैं या इनकी प्रतिस्थानी हैं। निर्देशन सेवाओं की अपनी स्वयं की पहचान है। तथापि निर्देशन तथा अध्यापन व प्रशासन के कुछ पक्षों के बीच तीव्र सीमांकन रेखाओं की अपेक्षा अंतःसंबंधों के क्षेत्र हैं। वास्तव में, एक अच्छा अध्यापक निर्देशन के अनेक कार्य करता है। अन्य बातों के साथ-साथ, वह न केवल उपलब्धि बल्कि समायोजन में विद्यार्थियों के अभिप्रेरणा और कठिनाइयों को समझने के लिए मूल्यवान सूचना और उपयोगी जानकारी भी प्रदान करता है। साथ ही, वह कक्षा का ऐसा वातावरण निर्मित करता है जो मानसिक स्वास्थ्य के लिए उपयोगी हो। वह विद्यार्थी और उसके माता-पिता के लिए शैक्षिक और व्यावसायिक योजनाएँ प्रदान करता है और अनेक अन्य कार्य करता है।

प्रशासन और निर्देशन, सेवाओं के मध्यम भी अंतःसंबंधों का एक क्षेत्र है। सामान्यतः निर्देशन सेवाएँ उपलब्ध कराना प्रशासन का दायित्व है और निर्देशन कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के अधिकार निर्देशन उपबोधक को दिए जाने चाहिए।

निर्देशन सेवाएँ अध्यापकों और प्रशासकों की सहायता करती हैं। अध्यापक प्रत्यक्ष भागीदारी द्वारा और प्रशासक सेवाएँ उपलब्ध कराकर सहायता करते हैं।

शिक्षा और निर्देशन एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं। संक्षेप में, शिक्षा में निर्देशन सम्मिलित है। सभी तरह का निर्देशन शिक्षा है परंतु शिक्षा के कुछ पहलू निर्देशन नहीं हैं। दोनों का उद्देश्य एक जैसा हो सकता है– जैसे व्यक्ति का विकास, परंतु प्रयोग की जाने वाली विधियाँ भिन्न हैं। शिक्षा के क्षेत्र में इस समय माध्यमिक स्तर की व्यावसायिक शिक्षा पर बल दिया जा रहा है।

व्यावसायिक (वृत्तिमूलक) शिक्षा किसी विशिष्ट रोज़गार अथवा व्यवसाय के लिए व्यक्ति में विद्यमान ज्ञान, कौशलों और अभिवृत्तियों से संबंधित है। यह उस अनुभव से संबंधित है जो किसी व्यक्ति को सामाजिक रूप से लाभदायक काम-धंधे को सफलतापूर्वक करने के योग्य बनाता है। अधिकांश रोजगारों में– जिनमें अर्धकुशल व्यवसाय शामिल हैं सफलता प्राप्त करने के लिए अभीष्ट कौशलों और तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। वर्तमान संचार प्रौद्योगिकी युग में कुछ विशेष कौशलों के संबंध में बुनियादी पृष्ठभूमि और शिक्षा की आवश्यकता पड़ेगी।

लिपिकीय, तकनीकी और व्यावसायिक रोज़गार जैसे सेवा क्षेत्रों में रोज़गार के अवसर बढ़ते जा रहे हैं। इन सभी रोज़गारों के लिए व्यावसायिक, तकनीकी और संवृत्तिक (व्यावसायिक) शिक्षा की जरूरत पड़ती है। हमारी शिक्षा पद्धति में सार्वजनिक शिक्षा कार्यक्रम की पाठ्यचर्या और दिशा में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करने की सर्वाधिक आवश्यकता है। इस

प्रकार के परिवर्तनों से ही उन सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का एकमात्र समाधान हो सकेगा जिनका हम आजकल सामना कर रहे हैं।

1.11 सारांश

हमने निर्देशन के स्वरूप, प्रयोजन और कार्यक्षेत्र, आवश्यकता और सिद्धांतों पर चर्चा की और इस पर भी विवेचन किया है कि निर्देशन शिक्षा के साथ किस प्रकार जुड़ा है। हमने यह भी जाना कि सर्वोत्तम संभव चयन और समायोजन करने में व्यक्तियों को निर्देशन प्रदान किया जाता है। यह भी स्पष्ट है कि निर्देशन एक आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है जो व्यक्तिगत मतभेदों को महत्त्व देता है और सभी के लिए है। विद्यालय जानेवाले बालकों की संख्या में वृद्धि, सामाजिक परिवर्तनों, जनसंख्या वृद्धि, बेरोज़गारी, पारिवारिक ढांचे में परिवर्तनों, कुसमायोजनों के कारण तथा रोजगार विकल्पों आदि के लिए निर्देशन की सर्वाधिक आवश्यकता पड़ती है।

निर्देशन का उद्देश्य, व्यक्ति की आवश्यकताओं और योग्यताओं को ध्यान में रखकर समाज में प्रभावकारी रूप से समायोजित करने के लिए व्यक्ति की सहायता करना है। हमने इस इकाई में निर्देशन के प्रमुख प्रकारों की चर्चा की है, जैसे शैक्षिक, व्यावसायिक, वैयक्तिक-सामाजिक निर्देशन आदि। निर्देशन शिक्षा का अभिन्न अंग है जो सर्वांगीण व्यक्तित्व विकसित करने में व्यक्ति की सहायता करता है।

अलग-अलग लेखकों ने अलग-अलग पहलुओं पर बल देते हुए निर्देशन को परिभाषित किया। तथापि अधिकांश इस बात पर सहमत है कि निर्देशन एक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित निर्देशन कार्यकर्ता और सहायता के इच्छुक ज़रूरतमंद व्यक्ति के बीच संबंध शामिल है। निर्देशन, अनुदेश और सलाह प्रदान करना कुछ ऐसे क्षेत्र है जो निर्देशन से घनिष्ट रूप से संबद्ध हैं। हालाँकि ये क्षेत्र निर्देशन से घनिष्ठ रूप से संबंद्ध हैं और उनके कार्यों में कुछ समानताएँ होने के बावजूद ये निर्देशन से भिन्न हैं।

निर्देशन सिद्धांतों और मान्यताओं पर आधारित एक वैज्ञानिक तकनीक है। निर्देशन के अंतर्गत माना जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने निर्णय लेने की योग्यता रखता है और उसे अपना मार्ग या पक्ष चुनने का पूरा अधिकार भी है। उपबोधक उपबोध्य को सलाह नहीं देता/देती और न ही उनकी समस्याओं को हल करता है, वह केवल यथोचित सोच और निर्णण लेने के लिए प्रोत्साहित करता है।

निर्देशन के वास्तविक लक्ष्य क्या है इस संबंध में उचित जानकारी के अभाव में अयर्थाथवादी अपेक्षाएँ बढ़ जाती है और हाथ केवल निराशा लगाती है। (1) सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य की उपलब्धि, (2) समस्या-समाधान, (3) निर्णयन, (4) व्यक्तिगत प्रभावोत्पादकता को बेहतर बनाना, (5) सोच परिवर्तन में मदद करना, और (6) व्यवहार-बदलाव/सुधार लाना निर्देशन के प्रमुख लक्ष्य हैं।

निर्देशन के मुख्य तीन उपागम हैं – (1) निदेशात्मक (2) अनिदेशात्मक (3) संकलनात्मक। उपागम का प्रयोग न भी करें, तो भी उपबोधन सामान्यतः चार अवस्थाओं से होकर गुजरता है, ये है प्रारंभिक अवस्था, मध्य अवस्था, अंतिम अवस्था और समाप्ति।

1.12 इकाई के अंत में अभ्यास कार्य

1) 'निर्देशन' शब्द की परिभाषा दीजिए और बताइए कि निर्देशन की कोई आवश्यकता है अथवा नहीं? कारण बतलाए।

2) अपने क्षेत्र (मोहल्ले) में किसी एक ऐसे विद्यालय का पता लगाइए जहाँ निर्देशन एकक हो। निम्नलिखित बिंदुओं पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए :

   क) विद्यार्थियों में व्यावसायिक जागरूकता।

   ख) विद्यालय/घर/समकक्ष समूह आदि के संबंध में समायोजन समस्याएँ।

3) निर्देशन शिक्षा से किस प्रकार जुड़ा है? स्पष्ट कीजिए।

4) किसी रोज़गार कार्यालय का दौरा कीजिए और कला/विज्ञान/वाणिज्य/ व्यवसाय से जुड़े विभिन्न रोज़गारों (वृत्तियों) के बारे में पता लगाइए और उन पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए।

5) निर्देशन के चार सिद्धांत कौन-कौन से हैं?

6) निर्देशन का प्रयोजन और कार्यक्षेत्र क्या है?

7) अपने विद्यालय में किसी ऐसे विद्यार्थी का पता लगाइए जिसे निर्देशन की आवश्यकता है। उसके लिए एक उपयुक्त उपबोधन उपागम चुनिए। विद्यार्थी की मदद के लिए आप जिन तकनीकों का प्रयोग करेंगे, उनकी जानकारी दीजिए। उस विशिष्ट आगम और तकनीकों को चुनने के कारण बताइए।

8) व्यावसायिक अर्थ में उपबोधन का अर्थ भिन्न है जो प्रचलित अर्थ से नितांत भिन्न है। चर्चा कीजिए।